प्रकरण सत्रह

बोवरी पर

मैं मित्रों और शत्रुओं के बीच अन्तर नहीं समझ सकता था। मेरे मित्र को यह सुनकर बड़ा आघात लगा कि मैं बोवरी जा रहा हूँ, किन्तु यद्यपि मैं बहुत-से संकटों से होकर गुज़रा था, मैंने यह कभी नहीं सोचा कि, "यह संकट है।" हर जगह मैंने सोचा था, "यह मेरा घर है।"

—श्रील प्रभुपाद के वार्तालाप से

अप्रैल, १९६६

जब श्रील प्रभुपाद कहीं बाहर गये हुए थे, तो कोई उनके ३०७ नम्बर के कमरे में शीशा तोड़कर घुसा गया और उनका टाइप राइटर और टेप रेकार्डर चुरा ले गया।

जब प्रभुपाद घर वापस आये, तब चौकीदार ने उन्हें चोरी की खबर दी : एक अज्ञात चोर खिड़की का शीशा तोड़कर उनके कमरे में घुस गया; उसने कीमती सामान उठा लिया और चम्पत हो गया। चौकीदार की बात सुनते सुनते प्रभुपाद को विश्वास हो गया कि अपराधी स्वयं चौकीदार था। पर वे इसे सिद्ध नहीं कर सकते थे, इसलिए लाचार होकर उन्हें हानि सहनी पड़ी। कुछ मित्र पुराने टाइप राइटर और टेप रेकार्डर की क्षति-पूर्ति के लिए तैयार थे।

भारत को लिखे गये एक पत्र में प्रभुपाद ने चोरी से हुई इस हानि को एक हजार रुपए (एकसौ सत्तावन डालर) से अधिक की बताया।

कहा जाता है कि मेरे कमरे में जो चोरी हुई, वह न्यूयार्क के लिए आम बात है। भौतिकतावादी संसार का यही तरीका है। अमेरिका के लोगों के पास हर वस्तु प्रचुर मात्रा में है और यहाँ का श्रमिक भी सौ रुपए प्रतिदिन पारिश्रमिक पाता है।

तब भी, चरित्र के अभाव में यहाँ चोर हैं। यहाँ की सामाजिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं है।

प्रभुपाद ने सिन्धिया के टिकट-एजेंट, जोसेफ फोरेस्टर को बताया था कि वे कुछ महीनों में भारत लौट जायेंगे। यह बात सात महीने पहले की थी। अमेरिका पहुँचने के बाद अब यह पहला अवसर था जब प्रभुपाद ब्रुकलिन-स्थित सिन्धिया के टिकट-कार्यालय में गये थे। श्रीमान् फोरेस्टर को उन्होंने चोरी के विषय में बताया, उनका उत्तर था, "क्लब में आपका स्वागत है।" फिर उन्होंने प्रभुपाद को हाल ही में हुई अपनी मोटर-गाड़ी की चोरी के बारे में बताया। उन्होंने समझाया कि न्यूयार्क नगर के लिए ऐसी चीजें असामान्य नहीं थीं। शहर के खतरों से फोरेस्टर ने प्रभुपाद को अवगत कराया और बताया कि चोरी और लूटपाट की घटनाओं से कैसे बचा जा सकता है। प्रभुपाद सिर हिलाते हुए उनकी बात सुनते रहे। उन्होंने श्रीमान् फोरेस्टर से कहा कि अमेरिका के नौजवान पथ-भ्रष्ट और किंकर्तव्यविमूढ़ हैं। भारत लौटने की अपनी योजनाओं के विषय में उन्होंने श्रीमान् फोरेस्टर से विचार-विमर्श किया और *भागवत* की एक प्रति उन्हें दिखाई।

३०७ नम्बर के कमरे में रहने का प्रभुपाद का हौसला ध्वस्त हो गया था। चौकीदार को पुनः चोरी करने से कौन रोक सकेगा? हार्वे कोहेन और बिल एप्स्टीन ने उन्हें डाउनटाउन में चले आने की सलाह दी और विश्वास दिलाया कि वहाँ युवावर्ग के मध्य उनके अधिक अनुयायी निकलेंगे। यह प्रस्ताव आकर्षक था और प्रभुपाद उसके बारे में पुनः विचार करने लगे। तब हार्वे ने प्रभुपाद को बोवरी-स्थित अपने स्टूडियो देने का प्रस्ताव रखा।

हार्वे मेडिसन एवन्यू की किसी विज्ञापन-कम्पनी में व्यावसायिक कलाकार के रूप में कार्य कर रहा था। तभी उसे उत्तराधिकार में कुछ सम्पत्ति मिली, जिससे उसे प्रेरणा हुई कि एक स्वतंत्र चित्रकार के रूप में अपने व्यवसाय का विकास करने के लिए वह बोवरी जाकर एक अटारी में रहे। न्यूयार्क के प्रति उसका मोह भंग होने लगा था। उसके परिचितों का एक दल, जिन्हें हेरोइन नशे की लत पड़ गई थी, उसके यहाँ आने-जाने लगा था और उसकी उदारता का लाभ उठा रहा था। हाल में ही उसकी कोठरी में चोरी भी हो गई थी। उसने नगर छोड़कर कैलीफोर्निया जाने का निर्णय लिया, किन्तु जाने के पहले उसने इच्छा व्यक्त की कि प्रभुपाद उसकी कोठरी में आयें और डेविड एलेन के साथ रहें।

डेविड एलेन ने सुना था कि हार्वे कोहेन सैन फ्रैन्सिसको जा रहा है, यदि उसकी ए.आई.आर. कोठरी कोई किराए पर ले ले। हार्वे डेविड को कोई लम्बे अरसे से नहीं जानता था, किन्तु जिस दिन हार्वे को जाना था, उससे पिछली रात में संयोग से लोअर ईस्ट

साइड में डेविड से उसकी भेंट तीन बार तीन विभिन्न स्थानों में हुई। हार्वे ने इसे एक संकेत माना कि वह अपनी कोठरी डेविड को किराए पर दे दे, किन्तु उसने विशेष शर्त यह रखी कि स्वामीजी भी कोठरी में आ जायें।

जब प्रभुपाद सेवेंटी-सेकंड स्ट्रीट का अपना स्थान छोड़ने की तैयारी कर रहे थे, तभी उनका एक परिचित, जो बिजली का मिस्त्री था और उसी इमारत में काम करता था, उन्हें आगाह करने आया। उसने कहा बोवरी भले आदमियों के रहने की जगह नहीं है। वह संसार में सबसे भ्रष्ट स्थान था। ३०७ नम्बर के कमरे से प्रभुपाद की वस्तुएँ चुरा ली गई थीं, किन्तु बोवरी जाना इसका समाधान नहीं था।

• • •

प्रभुपाद के नये घर, बोवरी का इतिहास लम्बा है। सोलहवीं शती के आरम्भ में जब मैनहट्टन न्यू एम्स्टर्डम कहलाता था और डच वेस्ट इंडिया कम्पनी के नियंत्रण में था, उस समय न्यू नीदरलैंड के गवर्नर पीटर मिनविट ने एक उत्तर-दक्षिण सड़क का निर्माण कराया, जिसका नाम बोवरी रखा गया, क्योंकि सड़क की दोनों ओर कई *बोवरीज* अर्थात् कृषि-फार्म थे। देहाती क्षेत्र से जाने वाली यह सड़क धूल से भरी रहती थी। उसके दोनों ओर पुरानी डच-झोंपड़ियाँ थीं, जिनके पीछे पीटर स्टाइवेसैट की जागीर में लगाए गये आड़ू के वृक्षों के बगीचे थे। यह सड़क बोस्टन जाने वाली बड़ी सड़क का एक भाग बन गई और अमेरिका के क्रान्ति-काल में न्यूयार्क में प्रवेश का एकमात्र स्थलीय मार्ग होने के कारण युद्ध नीति के महत्त्व की हो गई।

अठारहवीं शती के प्रारम्भ में बोवरी में जर्मन प्रवासियों का प्राधान्य था; इस शती के उत्तर काल में वहाँ यहूदियों की प्रधानता हो गई और क्रमशः यह नगर की नाट्य-कला का केन्द्र बन गई। किन्तु, जैसाकि लोअर मैनहट्टन के एक इतिहास में लिखा है, "सन् १८७० ई. के बाद बोवरी के विख्यात अधःपतन का काल आया। नकली नीलाम घरों, पाँच सेंट की व्हिस्की और तुरन्त लुढ़का देने वाली शराब वाले मदिरालयों, उत्तेजक सस्ते अजायबघरों, गंदे और चूहों से भरे बासी बियर के अड्डों, साथ ही चार्ल्स एम. होयटे के गीत "बोवरी, बोवरी, मैं वहाँ फिर कभी नहीं जाऊँगा" आदि ने बोवरी को हमेशा-हमेशा के लिए राष्ट्र की चेतना में एक अवर्णनीय भ्रष्टाचार के स्थान के रूप में अंकित कर दिया।"

प्रभुपाद के मित्र, बिजली के मिस्त्री की बोवरी के प्रति प्रतिक्रिया कोई असाधारण नहीं थी। अब भी सारे संसार में बोवरी की ख्याति 'स्किड रो' के रूप में है—अर्थात् बरबाद और घर-विहीन शराबियों के अड्डे के रूप में। उस बिजली के मिस्त्री ने शायद बोवरी में व्यवसाय किया था और देखा था कि किस तरह ये परित्यक्त लोग घेरा बनाकर

एक-दूसरे को बोतल देते हुए बैठे रहते थे, या नालियों में बेहोश पड़े रहते थे, या रास्ता चलने वालों के पास लड़खड़ाते कदमों से जाते और पैसे माँगते हुए नशे में उनसे टकरा जाते थे।

बोवरी के सात या आठ हजार बेघरबार लोगों में से अधिकतर किराए के ऐसे घरों में सोते थे, जिन्हें दिन में उन्हें खाली कर देना पड़ता था। कहीं शरण न होने और कोई काम न होने के कारण वे सड़कों में मारे-मारे फिरते रहते—पटरियों पर किसी दीवाल का सहारा लिए चुपचाप खड़े रहते, या अकेले अथवा समूहों में मंद गति से चहलकदमी करते रहते। जाड़े के मौसम में वे एक साथ दो कोट और कई सूट पहन लेते थे, कभी-कभी वे नगर के कूड़ेदानों में आग जला देते और उनके चारों ओर बैठकर अपने आपको गर्म रखते। रात में, जिनके पास किराए के कमरे न होते, वे पटरियों पर, दरवाजों की सीढ़ियों पर, सड़कों के नुक्कड़ों में, फेंके गये बक्सों में सिमटकर, या शराबघरों की बगल में एक-दूसरे से सटकर पड़े रहते। चोरियाँ आम बात थीं, कोई व्यक्ति सोया मिल जाता, तो उसकी जेबें दस-बीस बार टटोली जातीं। बोवरी में अस्पतालों में भरती होने या मरने वालों की संख्या राष्ट्रीय औसत से पाँच गुनी थी और बेघरबार लोगों में बहुतों के शरीर पर ताजा घाव या मार-फेट के निशान मिलते थे।

प्रभुपाद की कोठरी, ९४ बोवरी, हूस्टन स्ट्रीट के छह ब्लाकों के दक्षिण में थी। हूस्टन और बोवरी के चौराहों के भारी यातायात में परित्यक्तों की भीड़ लग जाती थी। जब लाल बत्ती होने पर मोटर-गाड़ियाँ रुक जातीं तब ये निकम्मे लोग वहाँ पहुँच जाते और गाड़ियों के शीशे पोंछकर पैसे माँगते थे। हूस्टन के दक्षिण के पहले कुछ ब्लाकों में अधिकतर होटलों को रसद बेचने वाले और लैम्पों के भंडार, शराब खाने और छोटे उपाहार-गृह थे। इन ब्लाकों की इमारतें तीन या चार मंजिली थीं। ये बहुत पुरानी और संकीर्ण थीं। इनकी कोठरियाँ किरायेदारों से खचाखच भरी रहतीं और उजह से बचने वालें रास्तों से इनका चेहरा ढँका रहता था। बोवरी में शहर में आने जाने वालों के यातायात का क्रम बराबर बना रहता था। सड़क की दोनों ओर मोटर-गाड़ियाँ खड़ी रहतीं और निरन्तर चलने वाला यातायात कठिनाई से निकल पाता। काम के दिन कामकाजी लोग इन मंद-गति वाले निकम्मे लोगों को पीछे छोड़ते हुए तेजी से आगे बढ़ जाते थे। दुकानों या भंडार-गृहों की बहुत-सी खिड़कियों में सुरक्षा के लिए लोहे के दरवाजे लगे होते थे। इन दरवाजों के पीछे दुकानदार तरह-तरह के प्रकाश वाले लैम्प जला रखते थे, जिससे थोक और खुदरा ग्राहक उनकी ओर आकृष्ट हो सकें।

९४, बोवरी, हेस्टर स्ट्रीट के ठीक दो घर उत्तर में था। उसके कोने में विस्तृत 'हाफ मून' शराबखाना था, जहाँ अधिकतर पड़ोस के शराबी इकट्ठे होते थे। शराबखाने के ठीक

ऊपर चार-मंजिली सस्ता होटल था, जिस पर निऑन प्रकाश से 'पामा हाउस' अंकित था, जो सुरक्षा की दृष्टि से धातु की जाली से घिरा था और दूसरी मंजिल से लम्बी जंजीरों से लटक रहा था। ९२ बोवरी के होटेल का दरवाजा ९४ बोवरी के दरवाजे से छह फुट से अधिक दूरी पर नहीं था। ९२ बोवरी होटल में कोई लाबी नहीं थी, केवल एक निर्जन हाल था, जिसमें गंदी सफेद टाइलें लगी हुई थीं।

९४ बोवरी संकीर्ण चार-मंजिली इमारत थी। बहुत पहले यह भूरे पेंट से रंगी गई थी और, जैसाकि उन दिनों चलन था, इसके सामने आग से बचने के लिए भारी-भरकम काले रंग की सीढ़ी निकलती थी। इसका घिसा हुआ काला दुहरा दरवाजा, जिसके शीशे के पैनेल तारों को मढ़कर मजबूत बनाए गये थे, सड़क की ओर खुलता था। दरवाजे के ऊपर संकेत-चिह्न अंकित था "ए.आई.आर. थर्ड एंड फोर्थ" जिसका अर्थ यह था कि अधिवासी कलाकार तीसरी और चौथी मंजिलों पर रहते हैं।

पड़ोस में उत्तर की ओर स्थित साथ वाली इमारत, ९६ बोवरी की पहली मंजिल का इस्तेमाल सामान रखने के लिए होता था। इसका सामने का प्रवेश-मार्ग जंग लगे लोहे के फाटक से सुरक्षित था। ९८ बोवरी हेरल्ड नामक दूसरा शराबखाना था, जो हाफमून की तुलना में छोटा और अधिक गंदा और धुंधला था। इस तरह इस ब्लाक में दो शराबखानों, एक फ्लाप हाउस और अटारियों कला दो इमारतें थीं।

१९६० ई. के दशक में न्यूयार्क नगर के उस क्षेत्र में अटारियों में रहना अभी आरम्भ ही हो रहा था। नगर की ओर से चित्रकारों, संगीतज्ञों, शिल्पकारों और अन्य कलाकारों को (जिन्हें अधिकतर आवासों में प्राप्त स्थान से अधिक की आवश्यकता थी) उन इमारतों में रहने की अनुमति मिल गई थी, जो उन्नीसवीं शती में कारखानों के रूप में निर्मित हुई थीं। उन परित्यक्त कारखानों में अदाह्य दरवाजों, स्नान-टबों, फौव्वारा-स्नान कक्षों और उन्हें गर्म रखने की व्यवस्था हो जाने के बाद, कोई कलाकार अधिक खर्च का भार उठाए बिना ही उनमें अधिक स्थान का उपयोग कर सकता था। इन्हें ही कहते थे ए.आई.आर. की अटारियाँ।

९४ बोवरी की सबसे ऊपर वाली मंजिल पर स्थित हार्वे कोहेन की अटारी खुली जगह में थी, जो पूर्व से पश्चिम की ओर लगभग सौ फुट लम्बी और पच्चीस फुट चौड़ी थी। बोवरी की ओर पूर्व दिशा से इसे पर्याप्त प्रकाश मिलता था और पश्चिम की ओर इसके सिरे पर खिड़कियाँ भी थीं। इसकी छत में रोशनदान भी था। छत में लगी कड़ियाँ, जो खुली थीं, फर्श से बारह फुट की ऊँचाई पर थीं।

हार्वे कोहेन ने अपनी अटारी का उपयोग कला-शाला के रूप में किया था और चित्र बनाने के लिए काम में लाए जाने वाले चौखटे अब भी उसकी दीवालों में लगे थे।

रसोईघर और स्नान-कक्ष उत्तर-पश्चिम के कोने में अलग कर दिए गये थे और बोवरी की ओर की खिड़कियों से लगभग पन्द्रह फुट पर विभाजक लगाकर एक कमरा बना लिया गया था। विभाजक एक दीवाल से दूसरी दीवाल तक नहीं जाता था, वरन् दोनों सिरों पर खुला था और छत से कई फुट नीचे था।

प्रभुपाद के रहने का अपना निजी स्थान इस विभाजक के पीछे था। खिड़की के निकट उनका पलंग और कुछ कुर्सियाँ थीं। उनका टाइप राइटर उनके हात के बने ट्रंक पर रखा था; उसकी बगल में छोटा मेज था, जिस पर *भागवत* की पाण्डुलिपियाँ रखी थीं। उनकी धोतियाँ एक तार से लटकी सूखती रहती थीं।

विभाजक की दूसरी ओर लगभग दस फुट लम्बा और पाँच फुट चौड़ा एक मंच था, जिस पर प्रभुपाद कीर्तन और व्याख्यान के समय बैठा करते थे। मंच की दिशा पश्चिम की ओर, अटारी के लम्बे खुले क्षेत्र की ओर थी, जो खुला इस अर्थ में था कि वहाँ एक-दो दरियों और एक पुराने ढंग की ठोस लकड़ी का मेज तथा चित्राधार पर, हार्वे द्वारा निर्मित अपने पार्षदों के साथ नृत्य में रत भगवान् चैतन्य के चित्र के अतिरिक्त कुछ भी न था।

अटारी चार सोपान की ऊँचाई पर थी और उसमें केवल एक दरवाजा था, जो पीछे की ओर पश्चिमी सिरे पर था और अधिकतर भीतर से कसकर बन्द रहता था। बाहर की ओर यह दरवाजा एक गैलरी में खुलता था, जो केवल उस लाल रोशनी से प्रकाशित थी, जिसमें दरवाजे के ऊपर *एक्जिट* अथात् बाहर लिखा था। इस गैलरी से दाहिनी ओर कुछ कदम जाने पर खुला क्षेत्र आ जाता था। यदि कोई अभ्यागत कीर्तन या व्याख्यान के समय अटारी में प्रवेश करता तो वह स्वामीजी को दरवाजे से लगभग तीस फुट की दूरी पर, मंच पर बैठे देखता था। अन्य दिनों संध्याकाल में पूरी अटारी में अंधकार रहता। केवल छोटे गलियारे में *एक्जिट* अर्थात् बाहर की लाल रोशनी चमकती रहती और विभाजक की दूसरी ओर से, जहाँ प्रभुपाद कार्यरत होते, हल्का प्रकाश आता दिखाई देता।

प्रभुपाद बोवरी में धीमे प्रकाश में जीवनयापन कर रहे थे, जबकि सैकड़ों लावारिस, नगर के उसी ब्लाक में सैकड़ों बल्बों के खुले प्रकाश में पड़े रहते थे। उनकी निश्चित आय उन लावारिसों की आय से अधिक नहीं थी, न उनके लिए निश्चित आवास की ही कोई सुरक्षित व्यवस्था थी। तो भी उनकी चेतना भिन्न थी। वे *श्रीमद्भागवत* का अंग्रेजी में अनुवाद कर रहे थे और उस पर लिखे गये भक्तिवेदान्त तात्पर्यों द्वारा संसार को संबोधित कर रहे थे। वे रिवरसाइड ड्राइव की चौदहवीं मंजिल पर किसी फ्लैट में रह रहे हों अथवा बोवरी की किसी अटारी के एक कोने में, उनका कर्तव्य था समस्त मानवता की सर्वप्रथम आवश्यकता के रूप में कृष्ण-चेतना को संस्थापित करना। वे अपने अनुवाद-कार्य में लगे रहे और न्यूयार्क में कृष्ण-मन्दिर बनाने का स्वप्न उनके मन में निरन्तर बना रहा। चूँकि

उनकी चेतना कृष्ण के सार्वभौम उद्देश्य को साकार बनाने में लीन थी, इसलिए अपने आवास के लिए उन्हें किसी परिसर-विशेष की आवश्यकता नहीं थी। आवास का तात्पर्य उनके लिए ईंट और लकड़ी से बने घर में रहना नहीं, वरन् प्रत्येक परिस्थिति में कृष्ण की शरण में रहना था। जैसाकि प्रभुपाद ने अपटाउन में अपने मित्रों से कहा था, " हर स्थान मेरा घर है, जबकि कृष्ण की शरण के बिना मेरे लिए सारा संसार वीरान है।"

वे प्राय: इस शास्त्रीय कथन का निर्देश करते थे कि लोग तीन प्रकार के गुणों में रहते हैं: सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण। अरण्य का जीवन सतोगुणी है, नगर का जीवन रजोगुणी है और मदिरालय, वेश्यालय अथवा बोवरी जैसे भ्रष्ट स्थानों का जीवन तमोगुणी है। किन्तु विष्णु के मन्दिर में रहना आध्यात्मिक जगत, वैकुण्ठ में रहना है, जो तीनों लौकिक गुणों से परे है।

और बोवरी की वह अटारी भी, जहाँ प्रभुपाद अपनी बैठकें करते थे और संकीर्तन करते थे, दिव्य लोक थी। जब वे विभाजक के पीछे कोने में *श्रीमद्भागवत* के खुले पत्रों के सामने अपना कार्य करते होते थे, तो वह कक्ष भी उतना ही सात्विक था, जितना वृन्दावन में राधा-दामोदर के मन्दिर के पीछे का कमरा।

स्वामीजी के बोवरी की अटारी में रहने का समाचार सारे पैराडॉक्स भोजनालय में अधिकतर मौखिक बातचीत द्वारा फैल गया और लोग संध्या-समय उनके साथ कीर्तन करने के लिए आने लगे। बोवरी में संगीतमय कीर्तन विशेष रूप में लोकप्रिय हुआ, क्योंकि स्वामीजी की नई भक्त-मंडली में अधिकतर ऐसे स्थानीय गवैये और कलाकार थे, जिन्हें दर्शन-शास्त्र की अपेक्षा दिव्य संगीत में अधिक रुचि थी। प्रतिदिन प्रात:काल प्रभुपाद *श्रीमद्भागवत* पर कक्षा लगाते, जिसमें उपस्थित होने वालों में डेविड एलेन, राबर्ट नेल्सन और एक अन्य लड़का होते। और कभी कभी वे पकाने के काम में रुचि रखने वालों को पाक-विद्या सिखाते। किसी भी जिज्ञासु आगंतुक या अपने नये कक्ष-सहवासी के साथ व्यक्तिगत वार्तालाप के लिए वे सामान्यत: सुलभ रहते।

यद्यपि उस विस्तृत अटारी में प्रभुपाद और डेविड के रहने के अलग-अलग स्थान निश्चित थे, किन्तु शीघ्र ही सारी अटारी का उपयोग प्रभुपाद के उपदेश-कार्यों में होने लगा। प्रभुपाद और डेविड एक-दूसरे के साथ बहुत अच्छी तरह रहने लगे और पहले-पहल प्रभुपाद को डेविड उच्चाकांक्षी शिष्य लगा।

अप्रैल २७

उन्होंने भारत में अपने मित्रों को डेविड एलेन के साथ अपने सम्बन्ध के बारे में लिखा।

> वह सेवेंटी-सेकंड स्ट्रीट में अन्य लोगों के साथ मेरी कक्षा में आया करता था और जब मेरे कमरे में चोरी हो गई, तो उसने मुझे अपने आवास में बुला लिया। इस प्रकार मैं उसके साथ हूँ और उसे प्रशिक्षित कर रहा हूँ। उससे भविष्य में अच्छी आशाएँ हैं, क्योंकि वह सभी बुरी आदतें छोड़ चुका है। इस देश में स्त्रियों के साथ अवैध सम्बन्ध, धूम्रपान, नशाखोरी, मांस-भक्षण सामान्य बातें हैं। इनके अतिरिक्त, अन्य बुरी आदतें हैं, मल-त्याग के बाद केवल कागज का इस्तेमाल करना (और स्नान न करना) आदि। किन्तु मेरा अनुरोध मानकर उसने नब्बे प्रतिशत बुरी आदतें छोड़ दी हैं और वह महामंत्र का जप नियमित रूप से कर रहा है। इसलिए मैं उसे अवसर दे रहा हूँ और मैं समझता हूँ कि उसका सुधार हो रहा है। मैंने कल कुछ प्रसाद-वितरण की योजना बनाई है और वह कुछ चीजें खरीदने बाजार गया है।

डेविड जब पहले बोवरी आया, तब वह एक साफ-सुथरा कालेज का विद्यार्थी लगता था। वह इक्कीस वर्ष का था—छह फुट लम्बा, नीली आँखों वाला, सुन्दर और मेधावी प्रतीत होने वाला। न्यूयार्क में उसके अधिकतर नये मित्र अवस्था में उससे बड़े थे और उसे बच्चा समझते थे। डेविड के परिवार के लोग ईस्ट लानसिंग, मिशिगन में रहते थे और उसकी माँ ने किसी किरायेदार से उसकी अटारी एक सौ डालर प्रति मास किराए पर ले रखी थी। यद्यपि डेविड को बहुत अनुभव नहीं था, किन्तु उसने पढ़ रखा था कि मनोगति सम्बन्धी नशीली दवाओं के प्रयोग से मानसिक विस्तार सम्भव था और वह बड़ी तेजी के साथ एल.एस.डी. की खतरनाक दुनिया की ओर बढ़ रहा था। स्वामीजी से उसकी भेंट एक क्रान्तिकारी परिवर्तन के काल में हुई और उस भेंट ने उसके जीवन को गहराई से प्रभावित किया।

डेविड : *स्वामीजी से मेरा सम्बन्ध वास्तव में अच्छा था, किन्तु उनके इतना निकट होने से मुझमें जो प्रभूत ऊर्जा उत्पन्न हुई, उससे मैं अभिभूत हो गया। उनके सम्बन्ध ने मेरी चेतना को तीव्र गति से उत्प्रेरित किया। रात में स्वप्न में भी मुझे कृष्ण-चेतना की स्पष्ट झलक दिखाई देती। मैं उस समय प्रायः सो जाता, जब देर रात गये तक स्वामीजी जागा करते थे, क्योंकि वे अपने अनुवाद-कार्य में लगे रात को काफी देर तक जागते रहते थे। सम्भवतः उसी समय, उनके साथ गहरा सम्बन्ध होने के कारण, मेरे अन्दर कृष्ण-चेतना और स्वप्नों का प्रादुर्भाव होता था। यह मेरे संस्कृत अध्ययन के कारण भी था। जिस तरह प्रभुपाद शब्द प्रति शब्द अनुवाद करते थे, उसमें कितना सशक्त रहस्यात्मक गुण प्रतीत होता था।*

प्रभुपाद का अपटाउन का पुराना मित्र राबर्ट नेल्सन बोवरी में उनके पास आता रहा। डेविड के साथ प्रभुपाद की मित्रता के सम्बन्ध से वह प्रभावित था। उसने पाया कि स्वामीजी से डेविड बहुत सारी बातें सीख रहा है। राबर्ट ने भारतीय हारमोनियम किस्म का अमेरिका में बना हाथ से बजने वाला एक वाद्य-यंत्र खरीदा और प्रभुपाद के साथ कीर्तन करने के लिए उसने उसे डेविड को भेंट कर दिया। राबर्ट प्रतिदिन सवेरे सात बजे आ जाता और भागवत की कक्षा के बाद वह रेकार्ड बनाने और पुस्तकें बेचने के विषय में अपने विचारों को लेकर प्रभुपाद से अनौपचारिक रूप में बातें करता। वह स्वामीजी को बराबर सहायता देते रहना चाहता था। दोनों सामने की खिड़की के पास कुर्सियों में बैठ जाते; प्रभुपाद घंटों कृष्ण और महाप्रभु चैतन्य के विषय में चर्चा करते रहते और राबर्ट सुना करता।

बोवरी में प्रभुपाद से मिलने के लिए नये लोगों का आना शुरु हो गया था। ब्रांक्स का तीस वर्षीय अश्वेत पुरुष, कार्ल इयरजेन्स, कारनेल विश्वविद्यालय में पढ़ चुका था और अब स्वतंत्र रूप से भारतीय धर्म और जेन बौद्ध-धर्म का अध्ययन कर रहा था। 'मनोगति-साधन' के रूप में उसने नशीली दवाओं का प्रयोग किया था और भारतीय संगीत और काव्य में उसे रुचि-थी। अपने मित्रों में उसका बड़ा प्रभाव था और ध्यान में उनकी रुचि जगाने का उसने प्रयत्न किया था। संस्कृत पढ़ने में भी उसने थोड़ी बहुत रुचि का प्रदर्शन किया था।

कार्ल : *मैंने 'दि वंडर दैट वाज इंडिया' नाम की पुस्तक का पढ़ना अभी समाप्त किया था। संन्यासी, ब्रह्मचारी इत्यादि की परिभाषाओं से मैं अवगत हो चुका था। उपर्युक्त पुस्तक में इस बात का स्पष्ट चित्रण था कि अपने गेरुए परिधान में मार्ग पर जाता एक संन्यासी कैसे दिख सकता हैं। उस वर्णन का मेरे ऊपर मामूली ही प्रभाव ही पड़ा होगा, क्योंकि एक दिन संध्याकालीन शीत में मुझे ऐसे वर्णन का व्यक्ति देखने को मिल ही गया। मैं माइकल ग्रांट से मिलने जा रहा था; सम्भवतया मैं उसके साथ दम लगाता और जमकर बैठता और हो सकता है कुछ गाना-बजाना भी करता। मैं हेस्टर स्ट्रीट के रास्ते से आ रहा था। यदि कोई बोवरी को अपने बाएँ छोड़ता हुआ चलता जाए तो वह ग्रैंड स्ट्रीट से माईक के स्थान पर पहुँच सकता है। पर अजीब बात यह हुई कि मैं बोवरी की ओर चल पड़ा। कम दूरी का मार्ग तो यह था कि मैं ग्रैंड स्ट्रीट से जाता, किन्तु यदि मैं उस मार्ग से गया होता तो सम्भवत: स्वामीजी को न पाता।*

इसलिए मैंने हेस्टर स्ट्रीट पर चलने का निर्णय लिया और तब बाएँ मुड़ने का निश्चय किया। एकाएक मैंने इस गंदे घर के सामने चमचमाता केसरिया परिधान देखा। जब मैं वहाँ से गुजरा, तो मैंने देखा कि स्वामीजी घर में प्रवेश करने के लिए दरवाजे पर दस्तक दे रहे

थे। दरवाजे से सटकर दो आवारे आपस में सिमटे पड़े थे। दरवाजे पर दो किवाड़ें जैसी थीं, एक पर सील-मुहर थी और दूसरी पर ताला लगा था। दोनों आवारे स्वामीजी की दोनों ओर लेटे थे। एक की तो सचमुच मृत्यु हो गई थी—जैसाकि प्राय: होता है। ऐसी दशा में मृत व्यक्ति को हटाने के लिए पुलिस या स्वास्थ्य विभाग के लोगों को बुलाना पड़ता है।

मुझे लगता है कि दरवाजे पर पड़े आवारों को मैंने तब तक नहीं देखा, जब तक कि मैं स्वामीजी के पास नहीं पहुँच गया। मैंने उनसे पूछा, "क्या आप संन्यासी हैं?" और उन्होंने उत्तर दिया, "हाँ।" मैंने उनसे यह वार्ता चलाई कि वे मन्दिर की स्थापना किस प्रकार आरम्भ कर रहे है और उन्होंने चैतन्य महाप्रभु के बारे में तथा और अन्य सारी बातें बताईं। सड़क में खड़े-खड़े वे सभी विचित्र बातें, धाराप्रवाह बता गये। किन्तु वे जो कुछ बता रहे थे, उसके विषय में मैं बहुत कुछ जानता था। मुझे उपर्युक्त पुस्तक के पढ़ने का और भारतीय धर्म का अवगाहन करने का हाल में ही अवसर मिला था। इसलिए मुझे मालूम था कि मेरे लिए यह अवसर महत्त्वपूर्ण था और मैंने उनकी सहायता करनी चाही। हमने दरवाजे पर जोर का धक्का लगाया और अन्तत: हम अटारी में प्रविष्ट हो गये। प्रभुपाद ने मुझे कीर्तन के लिए आमंत्रित किया और बाद में मैं उस रात अपने पहले कीर्तन के लिए वहाँ गया। और उस दिन से मेरे लिए यह निश्चित कार्यक्रम बन गया—सप्ताह में तीन दिन वहाँ जाना। एक बार स्वामीजी ने मुझे अपने साथ ठहरने के लिए कहा और मैं उनके साथ करीब दो सप्ताह रहा।

कदाचित् संस्कृत में कार्ल की रुचि के कारण ही प्रभुपाद संस्कृत की कक्षाएँ लगाने लगे। कार्ल, डेविड और कुछ अन्य लड़के प्रभुपाद के निर्देशन में संस्कृत सीखने में घंटों लगाते। अटारी में मिले एक श्यामपट्ट का उपयोग करके प्रभुपाद ने उन्हें संस्कृत वर्णमाला सिखाई और उनके विद्यार्थी अपनी कापियों में लिखने का अभ्यास करते रहे। उनके कंधों के ऊपर से झुककर प्रभुपाद देखते थे कि वे सही लिख रहे हैं या नहीं और वे उनके उच्चारण का संशोधन करते थे। उनके विद्यार्थी केवल संस्कृत ही नहीं सीख रहे थे, अपितु *भगवद्गीता* की शिक्षाएँ भी ग्रहण कर रहे थे। प्रतिदिन प्रभुपाद उन्हें संस्कृत का एक श्लोक देते थे कि वे उसे पहले देवनागरी लिपि में लिखें, फिर रोमन लिपि में उनका रूपान्तर करें और तब शब्द प्रति शब्द अंग्रेजी में अनुवाद करें। किन्तु संस्कृत में उनकी रुचि घटती गई और प्रभुपाद ने धीरे-धीरे प्रतिदिन कक्षा लेना बन्द कर दिया और वे *श्रीमद्भागवत* के अनुवाद में अपना समय लगाने लगे।

उनके नये मित्रों को ये कक्षाएँ संस्कृत-कक्षाएँ लगती होंगी, किन्तु वास्तव में वे भक्ति-कक्षाएँ थीं। वे अमेरिका संस्कृत भाषा के दूत बनकर नहीं आये थे; उनके गुरु महाराज ने उन्हें कृष्ण-चेतना सिखाने के लिए भेजा था। किन्तु चूँकि उन्हें कार्ल और

उसके कुछ साथियों में संस्कृत सीखने की अभिलाषा दिखाई दी थी, इसलिए उन्होंने इसके लिए प्रोत्साहन दिया। अपनी युवावस्था में चैतन्य महाप्रभु ने भी एक संस्कृत पाठशाला चलाई थी, पर उनका वास्तविक उद्देश्य कृष्ण के प्रति प्रेम सिखाना था। वे इस तरह पढ़ाते थे कि हर शब्द का अर्थ कृष्ण निकलता था और जब उनके विद्यार्थियों ने इस पर आपत्ति की, तो उन्होंने पाठशाला बन्द कर दी। उसी तरह जब प्रभुपाद को पता चला कि संस्कृत में उनके विद्यार्थियों की रुचि अल्पकालिक थी—और चूँकि स्वयं वे संस्कृत भाषाविज्ञानियों की ओर से कोई विशेष उद्देश्य लेकर नहीं आये थे—इसलिए उन्होंने संस्कृत पढ़ाना बन्द कर दिया।

शास्त्रवेत्ता वैदिक विद्वानों के मानदंड के अनुसार संस्कृत-व्याकरण पर अधिकार प्राप्त करने के लिए किसी बालक को दस वर्ष का समय चाहिए। यदि कोई जीवन के दूसरे या तीसरे दशक के अन्त तक संस्कृत का अध्ययन न आरम्भ कर दे, तो बाद में प्राय: इसके लिए बहुत देर हो जाती है। स्वामीजी के शिष्यों में से निस्सन्देह कोई ऐसा नहीं था, जो संस्कृत-व्याकरण में दस वर्ष तक ध्यान केन्द्रित करने की सोच रहा हो और यदि कोई होता भी तो वह, केवल व्याकरण-विद् बनकर, आध्यात्मिक सत्य की अनुभूति नहीं कर सकता था।

प्रभुपाद ने इसे अधिक अच्छा समझा कि अपने पहले संस्कृत भाष्यकारों की संस्कृत की टीकाओं का अनुगमन करते हुए, वे अपने संस्कृत के ज्ञान का उपयोग *श्रीमद्‌भागवत* का अंग्रेजी अनुवाद करने में करें। अन्यथा कृष्ण-चेतना का रहस्य संस्कृत में बन्द पड़ा रह जायेगा। कार्ल इयरजीन्स को देवनागरी लिपि, संधि, क्रियाओं के रूप-परिवर्तन और संज्ञाओं का रूप-साधन सिखाने मात्र से अमेरिका के लोगों को दिव्य वैदिक ज्ञान नहीं मिल पायेगा। इससे अच्छा होगा कि वे संस्कृत में अपने ज्ञान का उपयोग लाखों संभाव्य पाठकों के लिए *भागवत्* के कई खंडों का अंग्रेजी अनुवाद करने में करें।

• • •

कैरोल बेकर की पृष्ठ-भूमि प्रवासी कैथलिक की थी। इसलिए स्वामीजी की एक आध्यात्मिक अधिकारी के रूप में उपस्थिति, माला पर जप करने के और संस्कृत के शास्त्र ग्रंथों से पाठ सुनाने के उनके अभ्यास को उसने तुरन्त कैथलिक मत से सम्बन्धित कर लिया। कभी-कभी वह स्वामीजी के साथ खाने-पीने की सामग्रियाँ खरीदने निकट के चाइनाटाउन में जाती थी। स्वामीजी अपना भोजन नित्य बनाते थे और कभी कभी कैरोल और अन्य लोग भगवान् कृष्ण के लिए प्रसाद तैयार करने का रहस्य सीखने के लिए वहाँ आ जाते थे।

कैरोल : वे रसोईघर में हमारे साथ भोजन बनाते थे और अपना भोजन बनाने के साथ-साथ वे हममें से हर एक के कार्यकलाप को देखा करते थे। उन्हें ठीक-ठीक पता था कि क्या कैसे होना चाहिए। वे प्रत्येक वस्तु को धोते थे और यह निश्चित करते रहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक कार्य ठीक प्रकार से करे। वे एक शिक्षक थे। हम चपातियाँ हाथ से बनाते थे; तब एक दिन उन्होंने मुझे एक बेलन लाने को कहा। मैं अपना बेलन ले आई और उन्होंने उसे आवाश्यकता के अनुसार ठीक कर लिया। कुछ लोगों को वे चपातियाँ बेलने में लगाते और स्वयं सावधानीपूर्वक उनका निरीक्षण करते रहते।

मैंने घर पर उनके लिए चटनी बनाई। वे हम लोगों के उपहार सदैव कृपापूर्वक स्वीकार करते थे, यद्यपि मुझे नहीं लगता कि वे उन्हें कभी खाते भी थे। शायद उन्हें इस बात की चिन्ता थी कि ऐसा न हो कि हम खाने-पीने की चीजों में कोई ऐसी वस्तु मिला दें, जो उनके भोजन में स्वीकार्य नहीं थी। वे मुझसे चीजें ग्रहण करते और उन्हें अलमारी में रख देते। मैं नहीं जानती कि अन्त में वे उनका क्या करते थे, पर मुझे विश्वास है कि उन्हें वे फेंक नहीं देते थे। मैंने उन्हें कोई ऐसी चीज खाते कभी नहीं देखा, जो मैंने तैयार की हो, यद्यपि वे हर चीज को स्वीकार कर लेते थे।

• • •

प्रभुपाद संध्याकालीन बैठकें सोम, बुध और शुक्रवार को किया करते थे, ठीक जैसे वे अपटाउन में करते थे। उनकी अटारी उनके बहुत से परिचितों के लिए रास्ते से हटकर कुछ बाहर पड़ती थी और फिर वह बोवरी में थी। सड़क के स्तर पर स्थित उसका दरवाजा नींद में डूबे लावारिसों के झुंड से बराबर अवरुद्ध रहता और अभ्यागतों को चार सोपान वाली सीढ़ियाँ चढ़ने के पहले कम-से-कम आधे दर्जन इन लावारिस आवारों को लाँघना पड़ता था। लेकिन अटारी में एक चीज जरूर नई थी; कोई भी वहाँ जा सकता था, हिप्पियों के समुदाय में बैठ सकता था और स्वामीजी को कीर्तन की अगुवाई करते देख सकता था। कमरे में प्रकाश धीमा था और प्रभुपाद धूप जलाते रहते थे। बहुत-से लोग आते-जाते रहते थे। उनमें से एक व्यक्ति—गुंथर—के मन पर बहुत स्पष्ट प्रभाव पड़ा।

गुंथर : बोवरी से सीधे एक कमरे में पहुँचा जाता था, जो धूप की गंध से भरा था। वहाँ शान्ति थी। हर एक दबी आवाज में बात कर रहा था या बिल्कुल नहीं कर रहा था। स्वामीजी कमरे में आगे बैठे थे और ध्यान में थे। कमरे में ऐसी गम्भीर शान्ति व्याप्त थी, जैसी मैंने पहले कभी नहीं अनुभव की थी। धर्मोपदेशक बनने के लिए मुझे दो वर्ष तक अध्ययन करना पड़ा था और ध्यान, अध्ययन तथा प्रार्थना करना सीखना पड़ा था। किन्तु यह मेरा पहला अवसर था, जब किसी प्राच्यवासी या हिन्दू से मेरा वास्ता पड़ा हो। कमरे

में बहुत सारे तकिए पड़े थे और लोगों के बैठने के लिए फर्श पर चटाइयाँ बिछी थीं। मेरे विचार में वहाँ कोई तस्वीरें या मूर्तियाँ नहीं थी। वहाँ केवल स्वामीजी थे, धूप की सुगंध थी, चटाइयाँ थीं और कमरे में बैठे लोगों का उनके प्रति स्पष्टतया सम्मान का भाव था।

हमारे ऊपर जाने के पहले कार्ल हँस रहा था और बता रहा था कि किस तरह स्वामीजी चाहते हैं कि हर व्यक्ति मंजीरों का उपयोग ठीक-ठाक करे। मैंने मंजीरा पहले कभी नहीं बजाया था, पर जब कार्यक्रम शुरू हुआ, तब मैंने स्वामीजी का अनुसरण करने का प्रयत्न किया, जो उसे एक विशेष ढंग से बजा रहे थे। कीर्तन जोर पकड़ रहा था, मंजीरों की ध्वनि उत्कर्ष की ओर बढ़ रही थी कि इसी बीच कोई गलत ढंग से बजाता प्रतीत हुआ। और स्वामीजी ने बहुत ही शान्त भाव से उसकी ओर अंगुली से संकेत किया; सभी उसकी ओर देखने लगे और हर चीज रुक गई। दूर से ही स्वामीजी ने उस व्यक्ति को सिखाया; उस व्यक्ति की समझ में सही ढंग आ गया और कीर्तन फिर आरम्भ हो गया। कुछ मिनट बाद... मंजीरों की ध्वनि और धूप की सुगंध... अब हम लोग बोवरी में नहीं थे। हम हरे कृष्ण कीर्तन करने लगे। कीर्तन करने का यह मेरा पहला अनुभव था—इसके पहले हमने कीर्तन कभी नहीं किया था। प्रोटेस्टेंट मत में ऐसा कुछ भी नहीं है, जो इसके निकट भी पहुँचता हो। हो सकता है कि 'हेल मेरी' गीत गाने वाले कैथलिकों में ऐसा कुछ होता हो, किन्तु वह भी बिल्कुल यही चीज नहीं हो सकता। कीर्तन करना बड़ा ही आनन्ददायक और मनोरंजक था और मैंने स्वामीजी को अत्यन्त सम्मोहक पाया।

पहले के अपटाउन के आवास की तुलना में बोवरी की अटारी अधिक खुली थी, इसलिए उतनी एकान्तता या गोपनीयता नहीं थी। और यहाँ के कुछ अभ्यागत शंकालु और यहाँ तक कि विरोधी भाव वाले भी थे, किन्तु प्रभुपाद को हर एक आत्मविश्वासपूर्ण और प्रफुल्ल-मन पाता। ऐसा लगता कि उनकी योजनाएँ सुदूरगामी हैं और उनमें उनके प्रति समर्पण का भाव था। वे जानते थे कि उन्हें क्या करना है और वे अकेले उसे करने में लगे थे। "यह एक व्यक्ति का कार्य नहीं है," उन्होंने कहा था। किन्तु वे जो कुछ कर सकते थे, उसका फल कृष्ण पर छोड़कर, उसे करते जा रहे थे। डेविड उनकी सहायता करने लगा था और उनके यहाँ और अधिक लोग आने लगे थे।

प्रभुपाद के लगभग सभी बोवरी के मित्र या तो गवैये थे या गवैयों के मित्र। वे संगीत में डूबे थे—संगीत, मादक दवाओं, स्त्रियों और आध्यात्मिक ध्यान में। चूँकि प्रभुपाद द्वारा हरे कृष्ण मंत्र की प्रस्तुति संगीतमय भी थी और ध्यान-प्रधान भी, इसलिए उन लोगों का मन स्वाभाविक रूप से उसमें लगता था। प्रभुपाद इस बात पर बल देकर कहते थे कि सभी वैदिक मंत्र (या ऋचाएँ) गाए जाते थे; वास्तव में *भगवद्गीता* शब्द का अर्थ ही है "भगवान् का गीत।" किन्तु वैदिक मंत्रों के शब्द दिव्य ध्वनि के रूप में भगवान् के अवतार

थे। मंजीरे, तबला या हारमोनियम जैसे वाद्य-यंत्र केवल कीर्तन की संगत के लिए हैं और भगवान् के नाम के कीर्तन से अलग उनका अपना कोई आध्यात्मिक उद्देश्य नहीं है। प्रभुपाद किसी भी वाद्य-यंत्र के प्रयोग की अनुमति देने को तैयार थे, जब तक कि वह कीर्तन से आकर्षण हराने वाला न हो।

कैरोल : *दृश्य अन्तर्राष्ट्रीय और संगीत के अनुकूल था। कुछ गवैये व्यावसायिक थे और बहुत-से ऐसे लोग थे, जिन्हें वाद्य-यंत्रों के बजाने या केवल सुनने में आनन्द आता था। कुछ अटारियों में कुछ कलाकार चित्र बनाने में लगे थे और मुख्य रूप से वहाँ यही हो रहा था। कीर्तन अविस्मरणीय होते थे। एक बार बड़ा सुन्दर समारोह हुआ। हममें से कुछ लोग इसकी तैयारी के लिए जल्दी पहुँच गये। उस दिन वहाँ एक सौ लोग आये होंगे।*

बोवरी की भीड़ के लिए संगीत और ध्यान के विलय में ध्वनि चेतना थी और चेतना ध्वनि थी। किन्तु प्रभुपाद के लिए भगवान् के नाम के बिना संगीत ध्यान नहीं था; वह केवल इन्द्रियों की तृप्ति था, या अधिक से अधिक एक प्रकार का शैलीबद्ध निर्विशेष ध्यान था। किन्तु उन्हें प्रसन्नता थी कि उनके कीर्तनों में गाने-बजाने के लिए उनका प्रवचन सुनने के लिए और उनके साथ कीर्तन करने के लिए संगीतकार आने लगे थे। कुछ ऐसे थे, जो अपने वाद्य-यंत्रों को अन्यत्र बजाने के कारण रात भर जागते रहने के बाद सवेरे प्रभुपाद के यहाँ आ जाते और उनके साथ कीर्तन करने लगते। ध्वनि से उनका ध्यान विरत करने का प्रयत्न प्रभुपाद की ओर से न होता, अपितु वे उन्हें ध्वनि देते। वेदों के अनुसार भौतिक संसार की सृष्टि में सर्वप्रथम तत्त्व ध्वनि या शब्द है। शब्द का स्रोत ब्रह्म या भगवान् हैं और भगवान् शाश्वत व्यक्ति-स्वरूप या साकार हैं। प्रभुपाद का बल इस बात पर था कि लोग भगवान् के व्यक्तिगत, दिव्य नाम का कीर्तन करें। जब वे हरे कृष्ण कीर्तन करने लगे, तो फिर इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि वे इसे जाज, लोक-संगीत या राक-संगीत समझते हैं अथवा भारतीय ध्यान।

कैरोल : *जब स्वामीजी कीर्तन करने-कराने लगते थे, उस समय लोग उनसे काफी प्रभावित हो जाते थे। बोवरी में मंजीरों की ध्वनि से एक प्रकार की दिव्यता छा जाती थी। स्वामीजी हारमोनियम का प्रयोग करते थे और बहुत-से लोग हाथ से मंजीरे बजाते थे। कभी-कभी स्वामीजी मृदंग बजाते थे। प्रारम्भ में ही उन्होंने शब्द के महत्त्व और शब्द के माध्यम से भगवान् के स्वरूप साक्षात्कार पर बल दिया था। मेरे अनुमान से इन संगीतकारों ने प्रभुपाद में जो आकर्षण पाया, वह इसी बात में था कि उन्होंने दिव्यता और भगवान् की प्राप्ति के साधन के रूप में 'शब्द' पर बल दिया। किन्तु प्रभुपाद गम्भीर लक्ष्य के पीछे थे; वे लोगों को शिष्य बनाना चाहते थे।*

• • •

नवागन्तुकों में माइकेल ग्रांट गम्भीर प्रकृति का था। माइक चौबीस वर्ष का था। उसका पिता यहूदी था और पोर्टलैंड, ओरेगान में जहाँ माइक पलकर बड़ा हुआ था, उसकी रेकार्डों की दुकान थी। पोर्टलैंड के रीड कालेज में और सैन फ्रैन्सिस्को स्टेट में संगीत सीखने के बाद माइक, जो पियानो और कई अन्य वाद्य-यंत्र बजाया करता था, अपनी मित्र-लड़की के साथ संगीत को व्यवसाय के रूप में अपनाने की आशा लेकर न्यूयार्क नगर चला गया। किन्तु व्यावसायिक संगीत की सम्भावना के प्रति उसका मोह शीघ्र ही भंग हो गया। रात्रि-क्लबों में वाद्य-यंत्र बजाना और व्यावसायिक माँगों की पूर्ति के लिए दलाली करना ऐसे कार्य थे, जो उसे विशेष अरुचिकर लगे। न्यूयार्क में वह संगीतज्ञों के संघ में सम्मिलित हो गया और संगीत के एक संयोजक तथा अनेक स्थानीय मंडलियों के एजेंट के रूप में कार्य करने लगा।

माइक, ग्रांड स्ट्रीट में बोवरी की एक ए.आई.आर. अटारी में रहता था। यह एक बड़ी अटारी थी, जहाँ संगीतज्ञ प्रायः खचाखच भरे अधिवेशनों के लिए एकत्र होते थे। किन्तु माइक ज्यों-ज्यों गम्भीर राग-रागनियों की रचनाओं की ओर मुड़ता गया, उसका मन संगीत सभाओं के सामाजिक पक्ष से हटता गया। उसकी रुचि उन आध्यात्मिक, अर्ध-आध्यात्मिक और रहस्यवादी पुस्तकों में केन्द्रित होने लगी, जिन्हें वह पढ़ता आ रहा था। वह नगर में कई स्वामियों, योगियों और स्वयं को अध्यात्मवादी कहने वालों से मिल चुका था और हठ-योग अपना चुका था। स्वामीजी से पहली भेंट के बाद से ही माइक की रुचि उनमें हो गयी थी और वह उनके साथ खुल गया था, जैसाकि वह सभी धार्मिक व्यक्तियों के साथ करता आया था। वह सोचता था कि सभी सच्चे धार्मिक पुरुष अच्छे होते हैं, यद्यपि किसी विशेष धार्मिक समुदाय के साथ जुड़ने की उसे इच्छा नहीं थी।

माइक : *स्वामीजी कुछ जाने-पहचाने-से लगने लगे, क्योंकि मैंने इस तरह के और भी स्वामियों को पहले देखा था। जिस तरह का पहनावा वे पहनते थे, जिस तरह वे दिखाई दे रहे थे—वयोवृद्ध और श्याम-वर्ण के—वह सब मेरे लिए नया नहीं था। किन्तु फिर भी उनमें कुछ नवीनता के तत्त्व भी थे। मैं बहुत जिज्ञासु था। जब मैं पहली बार अन्दर गया, उस समय मैंने उन्हें बोलते नहीं सुना—वे उस समय कीर्तन कर रहे थे—पर मैं तो केवल यह सुनने की प्रतीक्षा में था कि वे क्या कहने जा रहे हैं। मैंने लोगों को पहले भी कीर्तन करते सुना था। मैंने सोचा कि वे इस सुविधा-रहित स्थान में क्यों रहते, यदि जिस सन्देश का प्रचार वे करना चाहते हैं, वह उनकी व्यक्तिगत सुविधाओं से अधिक महत्त्वपूर्ण न हो ? मैं समझता हूँ कि जिस चीज का मुझ पर सबसे अधिक प्रभाव हुआ वह थी उनके चारों ओर व्याप्त वहाँ की विपन्नता। यह विचित्र बात थी, क्योंकि जिन स्थानों में पहले मैं जा चुका था, उनमें इसका ठीक उल्टा था—वे सभी बड़े सम्पन्न थे। मैनहट्टन के ऊपरी भाग*

में एक वेदान्त केन्द्र था और इस तरह के और बहुत-से स्थान थे। वे सब सौम्य, वयोवृद्ध पुरुषों से भरे रहते थे, जो चमड़े की कुर्सियों पर बैठे तम्बाकू के पाइप पीते रहते थे—वहाँ का माहौल इस ढंग का था। किन्तु यहाँ तो गरीबी ही गरीबी थी। सारी स्थिति विचित्र थी।

स्वामीजी बहुत ही सुसंस्कृत लगे, यह भी एक विचित्र बात थी कि वे वहाँ रहते थे। जब वे बोलने लगे, तो मैं तुरन्त जान गया कि वे विद्वान हैं और जो कुछ कहते हैं, पूरी आस्था के साथ कहते हैं। उनके कुछ कथन बड़े साहसपूर्ण थे। वे भगवान् के सम्बन्ध में बोल रहे थे—और यह बिल्कुल नई बात थी, भगवान् के विषय में किसी को बोलते हुए सुनना। मैं हमेशा किसी व्यक्ति को, जिसका मैं सम्मान करता था, ईश्वर के विषय में बोलते सुनना चाहता था। मैं सदा धार्मिक प्रवक्ताओं को सुनना चाहता था किन्तु मैं उनका मूल्यांकन बड़ी सावधानी से करता था। जब स्वामीजी बोलने लगे, तो मैं सोचने लगा—"अच्छा, तो यहाँ ईश्वर के विषय में बोलने वाला एक ऐसा व्यक्ति है, जो सचमुच ईश्वर का किंचित् साक्षात्कार प्राप्त कर चुका हो।" मैं जितने लोगों से मिल चुका था, उनमें से वे पहले व्यक्ति थे, जिसे भगवान् का भक्त कहा जा सकता था और जो वास्तव में गहराई से भक्ति का अनुभव करता था।

• • •

प्रभुपाद व्याख्यान दे रहे हैं।

श्रीकृष्ण अर्जुन को शुद्ध चेतना से कर्म करने के स्तर पर रखने का केवल प्रयत्न कर रहे हैं। हम पिछले कई दिनों से इस बात पर विचार कर चुके हैं कि हम केवल जड़ शरीर नहीं हैं, वरन् हम चेतन प्राणी है। किसी न किसी तरह, हमारा संसर्ग जड़ पदार्थ से हो गया है। इसलिए हमारी स्वतंत्रता बाधित हो गई है।

अब अपटाउन की तुलना में यहाँ उपस्थिति अच्छी है। अटारी पर स्थान अधिक है, सच तो यह है, इस समय जिस मंच पर प्रभुपाद बैठते हैं, उसका ही क्षेत्रफल सेवेंटी-सेकंड स्ट्रीट के उनके पूरे कार्यालय-कक्ष के लगभग बराबर है। यह गंदी-अंधेरी अटारी, जिसकी छत की कड़ियों पर भी पेंट नहीं हुआ है, मन्दिर की अपेक्षा पुराना मालगोदाम अधिक लगती है। उनकी श्रोता-मण्डली के सदस्य, जिनमें संगीतकार अधिक हैं, स्वामीजी के कीर्तन की रहस्यमयी ध्वनियों पर ध्यान केन्द्रित करने आये हैं।

कार्ल, कैरोल, गुंथर, माइक, डेविड, पैराडॉक्स का जनसमूह और अन्य लोग उनके यहाँ सोमवार, बुधवार और शुक्रवार रात को जमा हो जाते हैं, जब वे ठीक आठ बजे अपनी कक्षा आरम्भ करते हैं। कार्यक्रम के पहले आधे घंटे में हरे कृष्ण कीर्तन होता है, उसके बाद *भगवद्गीता* पर प्रभुपाद का व्याख्यान होता है, जो लगभग पैंतालीस मिनट

चलता है; जिसके बाद प्रश्नोत्तर का समय आता है और अन्त में आधे घंटे तक फिर कीर्तन चलता है और सब कुछ दस बजे तक समाप्त हो जाता है।

कीर्तन अभी समाप्त हुआ है और स्वामीजी बोल रहे हैं।

चेतन प्राणी के रूप में हम कार्य करने में स्वतंत्र हैं, कोई भी वस्तु प्राप्त करने में स्वतंत्र हैं। विशुद्ध, प्रदूषणरहित—रोग नहीं, जन्म नहीं, मृत्यु नहीं, वृद्धावस्था नहीं। इसके अतिरिक्त हमारे आध्यात्मिक जीवन में अन्य अनेक क्षमताएँ प्राप्त हैं।

जब वे बोलते हैं, तो वे विशुद्ध आध्यात्मिक रूप होते हैं। वैदिक शास्त्रों का कहना है कि साधु या संत दृश्य नहीं श्रव्य होता है। यदि श्रोता-मण्डली के लोग स्वामीजी को जानना चाहते हैं, तो उन्हें उनको सुनना पड़ेगा। अब वे केवल वह भारतीय आप्रवासी नहीं रह गये हैं, जो इस अटारी में विभाजक के उस ओर रहता है, सूखने के लिए अपने कपड़े तार पर फैला देता है और मुश्किल से खाने-भर को पाता है।

किन्तु अब वे भगवान् कृष्ण के देशकालातीत सन्देशवाहक के रूप में बोल रहे हैं और गुरु-शिष्य परम्परा की शृंखला में सैकड़ों आध्यात्मिक गुरु उनके माध्यम से बोल रहे हैं। वे न्यूयार्क के स्वेच्छाचारियों के बीच १९६६ ई. में यह कहते हुए आये हैं कि १९६६ ई. अस्थायी और भ्रामक है और वे शाश्वत हैं और स्वेच्छाचारी भी शाश्वत हैं। कीर्तन का यही अर्थ है और अब वे उसका विश्लेषण दार्शनिक दृष्टि से कर रहे हैं, मानव-चेतना में समग्र परिवर्तन का पक्ष लेते हुए। फिर भी वे जानते हैं कि लोग सबकुछ आत्मसात् नहीं कर सकते; इसलिए वे अनुरोध करते हैं कि जो जितना कर सके, उतना ही करें।

आप जानकर प्रसन्न होंगे कि आत्म-साक्षात्कार की यह प्रक्रिया एक बार आरम्भ हो जाये, तो इससे यह बात बिल्कुल निश्चित हो जाती है कि अगले जन्म में हम मानव रूप पाएँगे। कर्मयोग एक बार आरम्भ हो जाय, तो वह चलता जायेगा। यदि कोई अपना क्रम पूरा न भी कर पाए, तो भी कोई चिन्ता की बात नहीं; इससे कोई हानि नहीं, कोई हानि नहीं। यदि कोई आत्म-साक्षात्कार का यह योग आरम्भ करता है और दुर्भाग्य से उसे अच्छी तरह पूरा नहीं कर पाता—यदि वह मार्ग से विरत हो जाता है—तो भी उत्साहजनक बात यह है कि इससे उसकी कोई हानि नहीं है। उसको अगले जन्म में फिर अवसर मिलेगा और अगले जन्म का अर्थ सामान्य अगला जन्म नहीं है। और यदि कोई सफल हो जाता है, तो ओह! उसका क्या कहना। सफल व्यक्ति भगवद्धाम को प्राप्त होता है। इसलिए हम यह कक्षा चलाते हैं और यद्यपि आपके पास अनेक कार्य हैं, आप सप्ताह में तीन बार यहाँ आते हैं और समझने का प्रयत्न करते हैं। यह व्यर्थ नहीं जायेगा। आप यहाँ आना बन्द भी कर दें, तो भी इसका असर कभी नहीं जायेगा। मैं कहता हूँ, यह असर कभी नहीं जायेगा। यदि आप कुछ प्रयोगात्मक कार्य करें, तो वह बहुत ही अच्छा है। किन्तु यदि

आप कुछ प्रयोगात्मक कार्य नहीं भी करते और केवल श्रद्धापूर्वक हमारी बात सुनते हैं और भगवान् की प्रकृति क्या है, इसे समझते हैं—यदि आप केवल सुनें और विचारमात्र ग्रहण करें—तो आप इस भौतिक बन्धन से मुक्त हो जायेंगे।

स्वामीजी उस समुदाय को सम्बोधित कर रहे हैं, जो हिप्पी-जीवन में पूरी तरह डूबा है। वे जानते हैं कि वे नशीली दवाओं का उपयोग तुरन्त बन्द नहीं कर सकते और वहाँ वे अपनी प्रेमिकाओं के साथ बैठे हैं। उनकी जीवन-पद्धति है—गाना-बजाना, स्त्री-रमण करना और कभी-कभी ध्यान कर लेना और सदैव स्वतंत्र रहना। उनका व्याख्यान सुनने के बाद वे सारी रात वाद्य-यंत्रों, स्त्रियों, नशीली दवाओं और अन्तर्राष्ट्रीय स्वेच्छाचारियों के साथ बिता देंगे। तो भी वे किसी प्रकार स्वामीजी की ओर आकृष्ट हैं। स्वामीजी के पास कीर्तन की अच्छी लय है और वे उनकी सहायता करना चाहते हैं। उन्हें स्वामीजी की सहायता करने में प्रसन्नता है, क्योंकि स्वामीजी को किसी और का सहारा नहीं है। इसलिए प्रभुपाद उनसे कहते हैं, "बहुत अच्छा। यदि आप थोड़ा भी कर सकें, तो इससे आपका भला होगा। हम सब विशुद्ध आध्यात्मिक आत्मा हैं। किन्तु आप इसे भूल गये हैं। आप जन्म-मरण के चक्र में फँस गये हैं। अपनी मौलिक चेतना को जागृत करने के लिए आप जो कुछ भी कर सकें, उससे आपका भला होगा। इससे कोई हानि नहीं।"

स्वामीजी का मुख्य बल "व्यष्टि चेतना का भगवद्-चेतना से सामंजस्य बैठाने" पर है।... कृष्ण परम चेतना हैं। और व्यष्टि चेतना के प्रतिनिधि अर्जुन से कहा जाता है कि वे परम चेतना के सहयोग से बुद्धिमत्तापूर्वक कर्म करें। तब वे जन्म, मृत्यु, वृद्धावस्था और रोग के बन्धनों से मुक्त हो जायेंगे।

अमेरिका में चेतना एक लोकप्रिय शब्द है।—चेतना-विस्तार, सार्वभौम चेतना, चेतना की परिवर्तित स्थितियाँ और अब—व्यष्टि चेतना का भगवद्-चेतना से सामंजस्य स्थापित करना। प्रभुपाद समझाते हैं कि यह चेतना की पूर्णावस्था है। यह वह प्रेम और शान्ति है, जिसे प्रत्येक व्यक्ति वस्तुतः चाहता है। फिर भी प्रभुपाद युद्ध की शब्दावली में इसके विषय में वार्ता करते हैं।

• • •

वे युद्ध-भूमि में बात कर रहे हैं और अर्जुन कहता है—"मैं युद्ध नहीं करूँगा। राज्य प्राप्त करने के लिए मैं अपने सम्बन्धियों और बन्धुओं के साथ युद्ध नहीं करूँगा। नहीं, नहीं।" अब एक सामान्य व्यक्ति को लगेगा कि, "ओह, अर्जुन बहुत अच्छा आदमी है, अहिंसावादी। उसने अपने सम्बन्धियों के लिए सब कुछ त्याग दिया है। ओह! वह कितना अच्छा आदमी है" यह सामान्य परख है।

किन्तु कृष्ण क्या कहते हैं? वे कहते हैं, "तुम एकदम अज्ञानी हो" तनिक सोचिए। जिसे जन-सामान्य बहुत अच्छा, बहुत बढ़िया कहते हैं, भगवान् उसकी निन्दा कर रहे हैं। इसलिए आपको देखना है कि परम चेतना अर्थात् ईश्वर आपके कार्यों से प्रसन्न हैं अथवा नहीं। और अर्जुन के कार्य का अनुमोदन भगवान् कृष्ण ने नहीं किया। केवल अपनी सनक या इन्द्रियों की तुष्टि के लिए पहले अर्जुन लड़ने के लिए तैयार नहीं हुआ—किन्तु अन्त में कृष्ण की तुष्टि के लिए उसने युद्ध किया। और हमारी पूर्णता यही है कि हम परम ईश्वर की तुष्टि के लिए कार्य करें।

इस बिन्दु पर श्रोता-मण्डली में कुछ का मन असहमति से भर गया। वे सभी वियतनाम में संयुक्त राज्य की भूमिका के विरोधी हैं और यह विचार उनके लिए बड़ा कठिन है। अर्जुन की भाँति वे शान्ति चाहते हैं। तो स्वामीजी युद्ध का समर्थन क्यों कर रहे हैं?

स्वामीजी समझाते हैं : हाँ, युद्ध न करने का अर्जुन का विचार अच्छा है, किन्तु परम चेतन कृष्ण उन्हें युद्ध करने का आदेश देते हैं। अतएव अर्जुन का युद्ध करना सांसारिक नीति-शास्त्र से ऊपर है। यह निरपेक्ष है। यदि हम अर्जुन का अनुगमन करें, अच्छे-बुरे का विचार त्याग दें और कृष्ण के लिए कर्म करें, अपनी इन्द्रियों की तुष्टि के लिए नहीं, तो वह बिल्कुल ठीक होगा—क्योंकि कृष्ण परम चेतना हैं।

उनकी श्रोता-मण्डली में कुछ लोगों को, यद्यपि स्वामीजी का उत्तर दार्शनिक दृष्टि से बिल्कुल उचित प्रतीत होता है, किन्तु जो कुछ वे सुनना चाहते हैं, वह नहीं लगा। फिर भी वे उनका राजनीतिक दृष्टिकोण जानना चाहते हैं। क्या वे वियतनाम-युद्ध में अमेरिका के सम्मिलित होने का समर्थन करते हैं? क्या वे युद्ध-विरोधी हैं? किन्तु प्रभुपाद न तो युद्ध-समर्थक हैं न युद्ध-विरोधी। कृष्ण और अर्जुन का यह उदाहरण लेने में उनका कोई राजनीतिक उद्देश्य नहीं है। उनका विषय सरल और विशुद्ध है : सद् और असद् से ऊपर परमेश्वर हैं और उन परमेश्वर की इच्छा के अनुकूल कार्य करना भी सद् और असद् से ऊपर है।

किन्तु वियतनाम के विषय में उनका क्या कहना है? क्या कृष्ण कहते हैं कि वहाँ युद्ध करो? नहीं, स्वामीजी उत्तर देते हैं। वियतनाम का युद्ध कुरुक्षेत्र के युद्ध से भिन्न है। कुरुक्षेत्र के युद्ध में कृष्ण स्वयं उपस्थित रहकर अर्जुन से युद्ध करने को कहते हैं। वियतनाम की स्थिति भिन्न है।

किन्तु उनकी श्रोता-मण्डली को फिर भी एक अन्य आपत्ति है : यदि वे वियतनाम-युद्ध को सम्बोधित नहीं कर रहे हैं तो क्यों नहीं? आखिरकार यह १९६६ ई. है। यदि वे युद्ध के विषय में बात नहीं कर रहे हैं, तो उनकी प्रासंगिकता क्या है? स्वामीजी उत्तर देते

हैं कि उनका सन्देश सचमुच अत्यन्त आवश्यक और प्रासंगिक है। वियतनाम का युद्ध एक अनिवार्य कर्मफल है; यह केवल एक लक्षण है, पूरी समस्या नहीं। और केवल इसी दर्शन से वास्तविक समस्या का समाधान हो सकता है कि परम चेतना परमात्मा को सबकुछ समर्पित करो।

किन्तु बहुतों के लिए युद्ध का सन्दर्भ भावना से इतना भरपूर है कि वे वियतनाम की तात्कालिक राजनीति से ऊपर उठकर प्रभुपाद के वास्तविक सन्देश—परमात्मा के प्रति समर्पण—तक नहीं पहुँच सकते। वे स्वामीजी का आदर करते हैं; वे अनुभव करते हैं कि स्वामीजी एक गहनतर दर्शन का निर्देश कर रहे है, फिर भी अर्जुन और युद्ध की कथा समस्या को कठिन बना देती है। तथापि स्वामीजी *भगवद्गीता* की आधारभूल शिक्षा के उत्कृष्ट उदाहरण के रूप में अर्जुन के युद्ध का निर्देश करते रहते हैं।

आधारभूल शिक्षा के सम्बन्ध में उनकी श्रोता-मण्डली को कोई कठिनाई नहीं है। कठिनाई उदाहरण के कारण है। प्रभुपाद ने जान-बूझकर अपनी श्रोता-मण्डली के सम्मुख एक अस्थायी अनुरूपता प्रस्तुत की है। वे उनके शान्ति-आन्दोलन में सम्मिलित होने नहीं आये हैं और उनकी अदूरदर्शिता-पूर्ण शान्ति की धारणा को स्वीकार नहीं करते। वे उनका सामना करते हुए कहते हैं : कृष्ण-चेतना से युक्त होकर युद्ध करना ईश्वर की अनुभूति से वंचित तथाकथित शान्ति में जीने की अपेक्षा अच्छा है। हाँ, इस उदाहरण को स्वीकार करना उनके लिए कठिन है; इससे उनका मन गतिशील होता है। यदि उनकी श्रोता-मण्डली इसे स्वीकार कर लेती है, तो वह परम ईश्वर को समझने के निकट पहुँच सकती है।

• • •

"क्या अपनी चेतना का परम चेतना के साथ सामंजस्य स्थापित करना अत्यन्त कठिन है? बिल्कुल नहीं, बिल्कुल नहीं। कोई समझदार व्यक्ति नहीं कहेगा, "ओह, यह सम्भव नहीं है।"

उनका सुझाव यह नहीं है कि परम चेतना से समन्वित होने के लिए उनके श्रोताओं को वियतनाम में युद्ध करने जाना होगा या परमात्मा के नाम पर उस तरह का कोई अन्य भयंकर कृत्य करना होगा। वे जानते हैं कि आध्यात्मिक जीवन को भौतिक जीवन से अधिक आकर्षक होना है, नहीं तो उनकी श्रोता-मण्डली उसे स्वीकार नहीं करेगी। परमेश्वर से समन्वित होने के विषय को वे इतना व्यावहारिक, आकर्षक और सुन्दर बना देना चाहते हैं कि उसे हर कोई कर सके और करना चाहे। वे यह कहकर उन्हें प्रोत्साहित करना चाहते हैं कि उनके श्रोता अपना निजी कार्य करें—किन्तु कृष्ण के लिए।

आखिरकार, अर्जुन आजीवन योद्धा था। कृष्ण ने उसे अपना कार्य त्याग देने को नहीं कहा—अपितु कहा कि वह परमेश्वर के नाम पर उसे करता रहे। प्रभुपाद अपने श्रोताओं से भी यही चाहते हैं। और वे इसे ऐसे सरल कार्य से आरम्भ कर सकते हैं, जैसे परमेश्वर को अपना भोजन अर्पित करना।

क्योंकि हर व्यक्ति को भोजन करना होता है, इसलिए भगवान् भी कुछ खाना चाहते हैं। आप अपना भोजन पहले भगवान् को क्यों नहीं अर्पित करते? उसके बाद आप खाइए। किन्तु आप कह सकते हैं कि, "यदि भगवान् खा जायँगे, तो मैं कैसे खाऊँगा?" नहीं, नहीं, भगवान् इसे लेंगे नहीं। प्रतिदिन अपना भोजन बनाने के बाद हम उसे कृष्ण को अर्पित करते हैं। इसका एक साक्षी है। श्रीमान् डेविड ने इसे देखा है। (प्रभुपाद हँसते हैं।) भगवान् खाते हैं। किन्तु उनका आध्यात्मिक भोजन-ग्रहण करना ऐसा है कि उनके भोजन करने के बाद भी सम्पूर्ण भोजन बचा रहता है।

इसलिए हमारी रंचमात्र भी हानि नहीं होगी, यदि हम अपनी इच्छाओं को परमात्मा से समंजित कर लेते हैं। हमें केवल यह कला सीखनी है कि सामंजस्य कैसे किया जाता है। कोई चीज बदलनी नहीं होती है। एक योद्धा बदलकर कलाकार या संगीतज्ञ नहीं हो जाता। यदि आप योद्धा हैं तो योद्धा ही रहें। यदि आप संगीतज्ञ हैं तो संगीतज्ञ ही रहें। यदि आप डॉक्टर हैं, तो डॉक्टर ही बने रहें। आप जो भी हैं, वही रहें। किन्तु सामंजस्य कीजिए। यदि मेरे भोजन करने से भगवान् सन्तुष्ट हैं, तो यह मेरी पूर्णता है। यदि मेरे युद्ध करने से भगवान् सन्तुष्ट हैं, तो यह मेरी पूर्णता है। इसलिए जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हमें देखना है कि भगवान् सन्तुष्ट होते हैं या नहीं। यह तरकीब हमें जाननी है। तब हर चीज बहुत सरल हो जायेगी। हमें अपनी योजनाएँ बनाना या विचार निर्मित करना बन्द कर देना होगा और भगवान् की सर्वथा पूर्ण योजनाओं को स्वीकार करके उन्हें कार्यान्वित करना होगा। उसी में हमारे जीवन की पूर्णता निहित है।

और महाप्रभु चैतन्य ने चेतना के मंच पर कार्य करना बहुत सरल बना दिया है। जैसे कुछ संक्षिप्त नोट लिखने वाले स्कूली किताबों के स्थान पर सरल अध्ययन लिखते हैं, उसी तरह चैतन्य महाप्रभु ने संस्तुति की है कि आप जो भी व्यवसाय करना चाहें, उसे करें, किन्तु कृष्ण के विषय में केवल सुनते रहें। भगवद्गीता सुनते रहें और हरे कृष्ण कीर्तन करते रहें। केवल इसी उद्देश्य से हम यह संगठन बनाना चाहते हैं। अच्छा है, आप आये हैं और आप जो भी कार्य करते हों, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। धीरे-धीरे सबकुछ समंजित हो जायेगा, क्योंकि केवल कृष्ण के नाम को श्रवण से हमारा चित्त परिष्कृत हो जायेगा। यदि आप कृष्ण के नाम-कीर्तन का यह क्रम जारी रखते हैं, तो आप वास्तव में देखेंगे कि आपका हृदय कितना परिष्कृत होता जाता है और विशुद्ध चेतना की अनुभूति-

स्वरूप आत्म-साक्षात्कार की दिशा में आप किस प्रकार आगे बढ़ते जाते हैं।

प्रभुपाद परम चेतन भगवान् के नाम पर बोल रहे हैं और वे अपने नित्य के कार्यकलापों को भगवान् से सामंजस्य के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं।

मैं यहाँ सब कुछ करता रहता हूँ, पढ़ता रहता हूँ या लिखता रहता हूँ, कुछ न कुछ करता रहता हूँ—चौबीस घंटे। केवल जब मुझे भूख लगती है, तब मैं कुछ खाता हूँ। और केवल जब मुझे नींद आती है, तब मैं सोता हूँ। अन्यथा मुझे थकान अनुभव नहीं होती। आप श्रीमान् डेविड से पूछ सकते हैं कि यह बात सच है या नहीं।

निस्सन्देह, स्वामीजी के नित्य के कार्यकलापों के लिए डेविड एलेन के प्रमाण-पत्र की आवश्यकता नहीं है और उनके नियमित अभ्यागतों में से कोई भी देख सकता है कि वे सचमुच दिव्य हैं। उनका निजी जीवन परम चेतन परमात्मा से सामंजस्य स्थापित करने का सबसे बड़ा उदाहरण है। प्रभुपाद ने परमात्मा से सदैव सामंजस्य बनाए रखा है। वृन्दावन में भी उनका पूरा सामंजस्य था और अमेरिका आने और बोवरी में टिकने के पीछे उनका कोई निजी स्वार्थ, आवश्यकता या उद्देश्य नहीं था। वे बोवरी में दूसरों के हित के लिए आये और आज रात वे जो भाषण दे रहे हैं, वह भी दूसरों के हित के लिए है। उनके गुरु महाराज और भगवान् कृष्ण चाहते हैं कि बहुत देर होने के पहले ही बद्ध जीवात्माएँ माया के पाश से मुक्त हो जायें।

वे कभी उच्च स्वर में बोलते हैं, कभी तर्क प्रस्तुत करते हैं, कभी हँसते हैं, इस तरह वे उत्साहपूर्वक तब तक बोलते रहते हैं, जब तक वे थक नहीं जाते। अपने श्रोताओं को वे उतना ही देते हैं, जितना वे समझते हैं कि श्रोता ग्रहण कर सकते हैं। कृष्ण और अपनी गुरु-शिष्य परम्परा के सन्देशवाहक के रूप में वे निर्भय होकर उच्च स्वर में कह सकते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को परमात्मा से सामंजस्य करना चाहिए। वे इच्छानुसार जब तक उनके श्रोता सुनना चाहें, अपनी सशक्त वाणी में बोल सकते हैं। वे साधु हैं। (संस्कृत शब्द 'साधु' का अर्थ संत है या वह जो काटता है) और वे उसी सन्देश को बार-बार दुहराते हैं, जिसे हजारों वर्षों से मूल वैदिक संस्कृति के साधु कहते आ रहे हैं। वे अज्ञान और माया की ग्रंथियों को काटने के लिए वैदिक ज्ञान के शाश्वत भाव को पुनर्जीवित कर रहे हैं।

अतः हर वस्तु माया है, भ्रम है—हमारे जीवन के आरम्भ से। और वह माया इतनी प्रबल है कि उससे बच निकलना बहुत कठिन है। सब कुछ माया है। जन्म माया है। शरीर माया है। शारीरिक सम्बन्ध और देश माया है। पिता माया है। माता माया है। पत्नी माया है। बच्चे माया हैं। हर वस्तु माया है। और हम उस माया को पकड़ रहे हैं, यह सोचते हुए कि हम बहुत विद्वान और उन्नत हैं। हम कितनी वस्तुओं की कल्पना करने में लगे हैं। किन्तु ज्योंही मृत्यु आती है, जो वास्तविकता है—त्योंही हम हर चीज को भूल जाते हैं।

हम अपना देश भूल जाते हैं, सम्बन्धियों को भूल जाते हैं, हम अपनी पत्नी को, बच्चों को, पिता को, माता को भूल जाते हैं। प्रत्येक वस्तु समाप्त हो जाती है।

• • •

माइक ग्रांट : *मैं बाद में उनके पास गया। मेरे मन में वही भाव थे, जो उस समय हुआ करते थे जब संगीत-समारोहों में मैं महान् संगीतकारों को सुनने जाया करता था। मेरी अभिरुचि इस बात में हमेशा से रही है कि समारोहों के बाद मैं संगीतज्ञों और गवैयों से मिलूँ और जानूँ कि वे किस तरह के लोग हैं। स्वामीजी के बोलने के बाद भी मेरे मन में वैसा ही भाव उठा, इसलिए मैं उनके पास गया और बात करने लगा। पर यहाँ मेरा अनुभव दूसरों से इस बात में भिन्न था कि स्वामीजी किसी जल्दी में नहीं थे। वे मेरे साथ बात कर सकते थे, जबकि दूसरों के साथ केवल इतना ही हो पाता कि उनके कुछ शब्द सुन लिए जाते थे। उन लोगों की रुचि अन्य चीजों में दिखाई देती थी। पर स्वामीजी ऐसे व्यक्ति थे, जो अपनी अभिरुचि मुझमें व्यक्ति के रूप में दिखा रहे थे और मैं उनसे इतना अभिभूत हो गया कि जल्दी-जल्दी में कह देने के कारण मुझे बात नहीं सूझती थी। मैं आश्चर्यचकित था। हमारी भेंट इसलिए समाप्त हो गई कि मेरे पास और कुछ कहने को शेष नहीं रह गया था। यह अनुभव मेरे अन्य बहुत-से उन अनुभवों के ठीक विपरीत था, जिनमें यह होता कि कलाकार या वक्ता कुछ और करने की जल्दी में भाग लेते। यहाँ तो स्वयं मैं बात जारी नहीं रख सका।*

• • •

प्रभुपाद टहलना पसन्द करते थे। ९४ बोवरी की अपनी ड्योढ़ी से सीधे सड़क के पार वे फुल्टन होटल देख सकते थे, जो एक पाँच-मंजिला सस्ता मकान था। उनके चारों ओर निचले मैनहट्टन के अन्य घर थे, जिनके किराएदार सवेरे से लेकर शाम तक फुटपाथों पर चक्कर लगाया करते थे। कभी-कभी कबूतरों के झुंड एक मकान की छत से फड़फड़ाकर उड़ते और किसी दूसरे मकान की छत पर या सड़क में जा बैठते। यातायात बहुत अधिक था। बोवरी उस मार्ग पर स्थित था, जिससे ट्रक ब्रुकलिन और मैनहट्टन-पुलों को पार कर ब्रुकलिन को आया-जाया करते थे।

बोवरी की पहाड़ी उत्तर की ओर क्रमशः ढालू होती गई है और प्रभुपाद फोर्थ स्ट्रीट तक साइन बोर्डों, मैनहट्टन के कुछ क्षीण वृक्षों, सड़क की बत्तियों और यातायात के संकेतों को देख सकते थे। वे कान एडिसन को उसके विशिष्ट क्लाक टावर समेत तथा बादल न होने पर थर्टी-फोर्थ-स्ट्रीट पर स्थित एम्पायर स्टेट बिल्डिंग के शिखर को भी देख सकते थे।

वे बोवरी के आसपास प्रात:काल अकेले भ्रमण करते थे। उस वर्ष मई के महीने में सामान्य से अधिक वर्षा हो रही थी और प्रभुपाद एक छाता ले जाया करते थे। कभी कभी वे वर्षा में भी घूमा करते थे। वे नित्य अकेले नहीं रहते थे। कभी कभी वे अपने किसी नये मित्र के साथ घूमते और बातें करते थे। कभी कभी वे खरीददारी करते। करेला, दाल, हींग, बेसन और अन्य विशेष वस्तुएँ जो भारत में शाकाहारी भोजन का अंग हैं, चाइनाटाउनके निकटवर्ती बाजारों में मिल जाती थीं। अपनी अटारी छोड़ने के बाद वे कुछ कदम दक्षिण की ओर चलकर बोवरी और हेस्टर स्ट्रीट के कोने तक पहुँचते। हेस्टर स्ट्रीट पर दाहिने मुड़ने पर तुरन्त चाइनाटाउन आ जाता, जहाँ दुकानों, बाजारों और मैनहट्टन सेविंग्स बैंक को चीनी अक्षरों में लिखे होने से पहचाना जा सकता था। कभी कभी वे दक्षिण की ओर एक ब्लाक और आगे बढ़कर कनाल स्ट्रीट पहुँच जाते, जहाँ सेंट्रल एशियन फूड मार्केट था और पटरियों पर बहुत-सी फलों और सब्जियों की दुकानें थीं। बहुत सवेरे के समय पटरियाँ लगभग निर्जन रहती थीं, किन्तु जब कारोबार के लिए दुकानें खुलने लगती थीं, तो सड़कें स्थानीय कर्मचारियों, दुकानदारों, पर्यटकों और निरुद्देश्य मटरगश्ती करने वाले निकम्मे लोगों से भर जाती थीं। चाइनाटाउनकी चक्करदार सड़कों की पटरियों पर सैकड़ों छोटी-छोटी दुकानें थीं और उनके दोनों ओर की पटरियाँ पार्क की हुई मोटर-कारों से घिरी रहती थीं।

हेस्टर स्ट्रीट पर घूमते हुए प्रभुपाद कभी लिटल इटली पहुँच जाते, जो मलबरी स्ट्रीट में चाइनाटाउन से मिल जाता था। पड़ोस में ही उमबर्टो के क्लाम हाउस और पुग्लिया की काफी का विज्ञापन करने वाले पुग्लिया उपाहार-गृह के साथ-साथ, चाइनीज पोर्क प्रोडक्ट्स तथा मी जंग मी सूपरमार्केट जैसी दुकानें थीं।

बोवरी के पश्चिम से चाइनाटाउन और लिटल इटली की ओर भ्रमण प्रभुपाद अधिकतर खरीददारी के उद्देश्य से करते। किन्तु वे मन्दिर के लिए संभाव्य स्थान को भी लक्ष्य में रखते। चैथम स्क्वेयर में चैथम टॉवर ने उनका ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट किया। कभी कभी वे उलटी दिशा में चलते हुए ईस्ट रिवर और ब्रुकलिन ब्रिज तक पहुँच जाते। किन्तु जब एक मित्र ने उन्हें आगाह किया कि नदी के किनारे घूमने वालों को कोई छिपकर अपने निशाने का लक्ष्य बनाया करता है, तो उन्होंने उधर जाना बन्द कर दिया।

प्रभुपाद जहाँ रहते और टहलते थे, वहाँ का पड़ोस बहुत खराब था, किन्तु इसके बावजुद भी वे शायद ही कभी विचलित हुए। प्राय: वे देखते कि बोवरी के अनेक आवारे उनके दरवाजे पर सोते या अचेत पड़े रहते और उन्हें फाँदकर निकलना पड़ता। कभी-कभी कोई शराबी, अपने आपको न सम्हाल सकने के कारण उनसे जा टकराता। कभी कोई बेसहारा न समझ आने वाले कुछ शब्द गुनगुनाता या उन पर हँस देता। उनमें जो कुछ

गम्भीर होते, वे खड़े हो जाते और विनम्रतापूर्वक उनकी ओर इशारा करते और ९४ बोवरी के द्वार के अन्दर या बाहर उन्हें निकल जाने देते। स्वामीजी को रास्ता मिल जाता और वे उनके शिष्टाचार को स्वीकार करते हुए उनके बीच से निकल जाते।

बोवरी के जो लोग उनको घूमते हुए देखा करते थे, निस्सन्देह उनमें से थोड़े ही ऐसे थे, जो इस छोटे कद के, केसरिया वस्त्र पहने हुए, हाथ में छाता तथा सौदे के लिए एक गेरुआ थैला लिए हुए वृद्ध भारतीय साधु के विषय में कुछ अधिक जानते रहे हों।

कभी-कभी तो सड़क पर उनके नये मित्रों में से कोई मिल जाता। माइकेल ग्रांट की लड़की-मित्र, जान से बाहर घूमते समय उनकी भेंट कई बार हुई।

जान : *मैं उन्हें सड़क पर टहलते हुए, तरह-तरह के लोगों की भीड़ में देखा करती। उनके पास छाता हमेशा रहता और उनके चेहरे की मुद्रा सदैव सौम्य दिखाई देती। वे तीसरे पहर भ्रमण के लिए निकलते। कभी कभी वे शराबियों को लाँघकर आगे निकलते। और जब मैं मार्ग की पटरी पर उनसे मिलती, तो हमेशा घबड़ा-सी जाती। वे कहते, "क्या तुम जप करती हो?" और मैं उत्तर देती, "कभी कभी," और तब वे कहते, "यह बहुत अच्छी लड़की है।"*

• • •

पालथी मारकर बैठे हुए, तरह-तरह के पौधों के गमलों से सजे मेज के दराज से पीठ टिकाए, शरीर के चारों ओर सफेद ढीली चौड़ी चादर लपेटे, प्रभुपाद बहुत ही संजीदा, करीब-करीब विषादमग्न दिखाई देते थे। उनके ऐसे चित्र के साथ एक लेख *विलेज वायस* के जून के अंक में छपा। लेख में लिखा था :

> रहस्यवादी पश्चिम तथा व्यावहारिक पूर्व का मिलन ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी तथा उनके अमरीकी शिष्यों के बीच विचित्र विरोधाभास प्रत्येक तुलना से सजीव हो उठता है। स्वामीजी सत्तर वर्षीय, सुसंस्कृत और सुशिक्षित व्यक्ति हैं और वे एक वर्ष से शान्ति, सद्भाव, ईश्वर की निकटता सम्बन्धी अपने सन्देश का प्रचार करने तथा व्यावहारिक शब्दों में कहें, तो अमेरिका में अपने मन्दिर की स्थापना के लिए धन-संग्रह करने आये हैं।... अपने उपदेशों की भाँति ही स्वामीजी समझदार और स्पष्ट हैं। उनका मुख्य उपदेश यह है कि ईश्वर के पवित्र नाम का जप करके मानव भगवान् के अधिक निकट पहुँच सकता है।

स्वामीजी एक यथार्थवादी व्यक्ति हैं, बावजूद इसके कि वे अमेरिका में ईश्वरविहीन

भौतिकता का मूल खोजने आये हैं (जिसे वे एक ऐसा रोग कहते हैं, जिसने भारत को पहले से आच्छादित कर रखा है) स्वामीजी का कहना है, "यदि पृथ्वी पर कोई धन-सम्पन्न देश है, जहाँ मन्दिर बनाया जा सकता है, तो वह यही है। स्वामीजी अमेरिका में कृष्णभावनामृत का एक अन्तर्राष्ट्रीय संघ स्थापित करना चाहते हैं। यह संघ सबके लिए खुला होगा—स्त्रियों के लिए भी।

यह लेख होवर्ड स्मिथ ने लिखा था। उसे स्वामीजी के विषय में यह जानकारी पहले पहल एक परिचित व्यक्ति से फोन पर मिली थी, जिसने उसे बताया था कि भारत से एक रुचिकर धार्मिक व्यक्ति आये हैं, जो बोवरी की एक अटारी में रह रहे हैं। होवर्ड के परिचित ने कहा था कि, "तुम कभी भी वहाँ जा सकते हो; वे हमेशा वहीं रहते हैं। मेरे विचार से वे तुम्हें सम्मोहक लगेंगे। मेरा विश्वास है कि वे शीघ्र ही एक महान् धार्मिक आन्दोलन आरम्भ करने वाले हैं।"

होवर्ड स्मिथ : *अतः मैं वहाँ गया और सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर उस अत्यन्त भीरु कलाकारों की अटारी में प्रविष्ट हुआ। वहाँ सर्वत्र कालीन बिछे थे, जो पुराने और फटे हुए थे और बहुत सारे लोग तरह-तरह की हिप्पी वेशभूषा में बैठे थे; साथ ही उनके पहनावे में कुछ ऐसा भी था, जिसे मैं समझता हूँ, वे भारतीय वेशभूषा मानते होंगे। कमरे में लोग इधर-उधर अकेले, दीवाल की ओर मुंह किये बैठे थे, मानो उनका आपस में एक-दूसरे से कोई सम्बन्ध न हो। वे पालथी मारकर बैठे थे और प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से कुछ भिन्न कार्य करता प्रतीत हो रहा था। जब मैं अन्दर प्रविष्ट हुआ, तो किसी ने मुझ पर कोई ध्यान नहीं दिया।*

मैंने देखा कि वहाँ जूते पंक्तिबद्ध रखे हैं। मैंने सोचा, "हो सकता है मुझसे भी अपेक्षा की जाती हो कि मैं भी जूते उतार दूँ।" लेकिन किसी ने मुझसे कुछ कहा नहीं। इसलिए मैं कालीन के किनारे-किनारे घूमने लगा और प्रतीक्षा करने लगा कि मुझ पर ध्यान दे। मुझे आश्चर्य हो रहा था कि वहाँ क्या हो रहा है और मैं किसी को कोई बाधा नहीं पहुँचाना चाहता था, क्योंकि सभी, जैसी भी प्रार्थना वे कर रहे थे, उसमें गहराई से तल्लीन दिखाई देते थे।

अटारी में पीछे की ओर मुझे एक छोटा-सा मद्रासी किस्म का पर्दा दिखाई दिया; इसलिए मैंने पर्दे के पीछे वाले स्थान में झाँकने का निश्चय किया। मैंने अन्दर देखा तो वहाँ स्वामी भक्तिवेदान्त पालथी मारे, केसरिया वस्त्र धारण किये, मस्तक तथा नाक पर तिलक लगाए और हाथ में माला की थैली लिए बैठे थे। यद्यपि वे वास्तविक वस्तु लग रहे थे, किन्तु उनके निकट पहुँचा जा सकता था और मैंने कहा, "हेलो," और उन्होंने मेरी ओर देखा। मैंने कहा, "स्वामी भक्तिवेदान्त?" और वे बोले, "हाँ।" मैंने कहा, "मैं होवर्ड

स्मिथ हूँ।" मैं बैठने की आशा कर रहा था, इसलिए मैं बोला, "क्षमा कीजिए, मुझे अपने जूते उतार देने होंगे," और वे बोले, "तुम अपने जूते उतारना क्यों चाहते हो?" मैंने कहा, "मैं नहीं जानता क्यों, मैंने देखा कि सभी के जूते बाहर हैं।" और वे बोले, "मैंने तो तुम्हें जूते उतारने को नहीं कहा।" मैंने पूछा, "ये सभी लोग यहाँ क्या कर रहे हैं?" और वे बोले, "मैं नहीं जानता और वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं। मैं उन्हें सिखाने का प्रयत्न कर रहा हूँ और वे मुझे गलत समझ रहे प्रतीत होते हैं। वे बहुत उलझे हुए लोग हैं।"

तब हम बैठकर बातें करने लगे और मुझे वे उसी समय बहुत अच्छे लगने लगे। मेरा कहने का मतलब है कि मैं कई अन्य स्वामियों को मिल चुका था, किन्तु मुझे वे अधिक अच्छे नहीं लगे थे। मेरे विचार में उन सब को एक ही श्रेणी में इकट्ठा करके "भारत के वे स्वामी!" कह देना अनुचित होगा। क्योंकि वे अत्यन्त मौलिक थे, मुझे इस कारण वे बहुत अच्छे लगने लगे। उनके कारण मेरा मन न केवल बिल्कुल शान्त हो गया, अपितु वे मुझे बहुत खुले हुए और ईमानदार लगे—जैसे, उन्होंने कई बातों में मेरी सलाह पूछी। वे इस देश में बिल्कुल नये थे।

मैंने सोचा कि उनके विचारों को यहाँ जड़ जमाने का अच्छा अवसर है, क्योंकि स्वामीजी इतने अधिक व्यावहारिक लगते थे। उनका मस्तिष्क बादलों में नहीं उड़ता लगता था और न वे अपने हर तीसरे शब्द में रहस्यवाद की बातें करते थे। मेरे अनुमान में उनका आत्मा तो उसी पर था, किन्तु सामान्य बातचीत में उनकी चेतना वहाँ नहीं थी।

तब उन्होंने कहा कि अनेक लोगों ने उन्हें बताया था कि वायस में लेख लिखना अच्छा होगा और वह मुख्य रूप से उन लोगों तक पहुँच सकेगा, जो शायद पहले से उनके उपदेशों में रुचि रखते थे या परिचित थे। मैंने कहा कि मेरे विचार में आप ठीक हैं। उन्होंने पूछा कि क्या मैंने भारतीय संस्कृति के विषय में कोई पुस्तक पढ़ी है या मैं कुछ जानता हूँ। मैंने उत्तर दिया कि नहीं, सचमुच मैं कुछ नहीं जानता था। हम थोड़ी देर तक बात करते रहे और उन्होंने मुझे बताया कि भारत में वे इन पुस्तकों का अंग्रेजी अनुवाद कर चुके हैं और वे उनके पास हैं। उन पुस्तकों को मुझे देते हुए उन्होंने कहा, "यदि आप अधिक जानकारी चाहते हों, तो उन्हें पढ़ सकते हैं।"

मेरे लिए स्पष्ट हो गया था कि मैं किसी ऐसे व्यक्ति से बात नहीं कर रहा था, जिसने अभी-अभी निर्णय लिया हो कि उसे ईश्वर के दर्शन हो गये हैं और वह लोगों को इसके बारे में बताने जा रहा है। स्वामीजी एक सुशिक्षित व्यक्ति प्रतीत हो रहे थे, सचमुच मुझसे कहीं अधिक सुशिक्षित। मुझे उनकी विनम्रता बहुत पसन्द आई। तत्काल वे मेरे प्रिय बन गये।

मैं जो भी जानना चाहता था, उन्होंने उसे विस्तार से समझाया—अपनी वेशभूषा, अपने माथे पर के तिलक और अपनी जपमाला-थैली की महत्ता उन्होंने समझाई। और मुझे उनकी सारी व्याख्याएँ पसन्द आईं। सब कुछ व्यावहारिक था। उसके बाद उन्होंने संसार-भर के मन्दिरों के बारे में बातें कीं और कहा, "हमें काफी लम्बी यात्रा करनी है। किन्तु मैं बहुत धैर्यवान हूँ।"

• • •

प्रभुपाद उस चीज के प्रति आशावान थे, जिसे *वायस* के लेख में "उनका अमरीकी चर्च" कहकर निर्दिष्ट किया गया था। उनके व्याख्यान और कीर्तन सजीव होते थे और कम-से-कम उनके कुछ नियमित अनुयायी बनते जा रहे थे। किन्तु भारत से कोई आशा न थी। सुमति मोरारजी, अपने गुरु-भाइयों और भारत की केन्द्रीय सरकार से वे पत्र-व्यवहार करते जा रहे थे, किन्तु उनके उत्तर उत्साहजनक नहीं थे।

इस विश्वास में कि पद्मपत सिंघानिया मैनहट्टन में एक कृष्ण-मन्दिर बनाने की उनकी योजना को मान जायेंगे और उसके निर्माण में आर्थिक सहायता देंगे, प्रभुपाद विदेशी मुद्रा मुक्त करने के लिए स्वीकृति देने हेतु नई दिल्ली को प्रार्थना-पत्र भेजा था। उन्होंने रिजर्व बैंक आफ इंडिया, नई दिल्ली को लिखा था।

> मैं यहाँ सांस्कृतिक केन्द्र स्थापित करना चाहता हूँ और इसके लिए भारत से कुछ विदेशी मुद्रा प्राप्त करना चाहता हूँ। मैं समझता हूँ कि विस्मरण के इन दिनों में भगवत्-प्रेम की संस्कृति का प्रचार करने के लिए अच्छी सम्भावनाएँ विद्यमान हैं।

एक महीने बाद रिजर्व बैंक ने उन्हें सलाह दी थी कि वे भारत की केन्द्रीय सरकार के वित्त मंत्री को, वाशिंगटन के भारतीय दूतावास के माध्यम से अपनी प्रार्थना फिर से भेजें। प्रभुपाद ने तदनुसार कार्यवाही की थी। उसके बाद एक महीना और बीत गया, लेकिन भारत सरकार से कोई उत्तर नहीं मिला।

स्वामीजी के एक गुरु-भाई ने लिखा था कि वे स्वयं भारत आ जाये और सरकार की अनुमति प्राप्त करने के लिए व्यक्तिगत प्रयास करें। पर प्रभुपाद इस समय अमेरिका नहीं छोड़ना चाहते थे। उन्होंने सुमति मोरारजी को लिखा :

> मैं भारत की यात्रा करने और वहाँ से फिर वापस आने से बचने का प्रयत्न कर रहा हूँ। विशेपकर, इस कारण कि मैं उपर्युक्त पते पर सप्ताह में तीन बार कक्षा ले

> रहा हूँ और कुछ अमरीकी युवकों को संकीर्तन और भगवान् की भक्ति में प्रशिक्षित कर रहा हूँ। इनमें से कुछ बड़ी निष्ठापूर्वक अपने पाठ सीख रहे हैं और भविष्य में वे कठोर मानदण्ड के अनुसार बड़े अच्छे वैष्णव हो सकते हैं।

एक दिन एक विचित्र अपरिचित संवाददाता ने भारत से प्रभुपाद को एक पत्र लिखा। उसका नाम मुक्ति ब्रह्मचारी था। प्रभुपाद के एक गुरु-भाई के शिष्य के रूप में अपना परिचय देते हुए और अतीत में उनके साथ अपनी किंचित् जान-पहचान का स्मरण कराते हुए, मुक्ति ने उत्कण्ठा प्रकट की कि वे अमेरिका में प्रभुपाद के साथ कार्य करना चाहते हैं। निस्सन्देह, प्रभुपाद को भारत के अपने गुरु-भाइयों से सहायता पाने की अब भी आशा थी। "यह मिशन केवल एक व्यक्ति का कार्य नहीं है।" अतः उन्होंने मुक्ति को अमेरिका आने के लिए आमंत्रित किया और लिखा कि वे अपने गुरु महाराज से प्रार्थना करें कि वे व्यक्तिगत प्रभाव से विदेशी मुद्रा के लिए सरकार से अनुमति प्राप्त करने में सहायता करें। मुक्ति ने अपनी उत्सुकता की पुष्टि करते हए पुनः लिखा, किन्तु इस बात पर सन्देह प्रकट किया कि उनके गुरु महाराज से उन्हें अमेरिका जाने की अनुमति मिलेगी। मुक्ति का विचार था कि वे पहले संयुक्त राज्य पहुँच जायें और उसके बाद वे अपने गुरु महाराज से सहायता की याचना करें। प्रभुपाद को चिढ़ लगी और उन्होंने तुरन्त उत्तर लिखा :

> क्या अमेरिका में प्रचार करना मेरा निजी व्यवसाय है? श्रील प्रभुपाद भक्तिसिद्धान्त सरस्वती की इच्छा विदेशों में श्रील रूप रघुनाथ* के सन्देश के प्रचार-केन्द्रों के रूप में कुछ मन्दिर निर्माण करने की थी और मैं संसार के इस भाग में यह कार्य कर रहा हूँ। पैसा तैयार है और अनुकूल अवसर आ गया है। यदि वित्त मंत्री से मिलकर इस कार्य को किया जा सकता है, तो हम प्रतीक्षा इसलिए क्यों करें कि आप अपने गुरु महाराज से सहयोग इस डर से नहीं माँग सकते कि आपकी अमेरिका की यात्रा वे रद्द कर देंगे। कृपया इस तरह न सोचें। हर वस्तु को श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती प्रभुपाद के कार्य के रूप में ग्रहण करें और जो आवश्यक हो उसे पूरा करने का प्रयत्न करें। एक क्षण के लिए भी न सोचें कि मेरी रुचि आपके गुरु महाराज की रुचि से भिन्न है। हम श्रील प्रभुपाद की इच्छा को अपनी निजी योग्यतानुसार सम्पन्न कर रहे हैं। सम्मिलित प्रयास और भी अच्छा हो सकता है।

मुक्ति ने पूरा प्रस्ताव अपने आध्यात्मिक गुरु के समक्ष रखा, जिन्होंने जैसी कि मुक्ति

की भविष्यवाणी थी, उनकी अमेरिका की यात्रा रद्द कर दी। यद्यपि मुक्ति के गुरुजी श्रील प्रभुपाद के गुरु-भाई थे, तथापि वे इस मामले में पड़ना नहीं चाहते थे और उन्हें इसमें सन्देह हो रहा था कि प्रभुपाद वास्तव में पद्मपत सिंघानिया से अनुदान प्राप्त कर सकेंगे।

और अब मुक्ति ब्रह्मचारी को भी सन्देह होने लगा था : उसने लिख भेजा "यदि आपका कार्यक्रम सच्चा नहीं है, तो किसी महान् व्यक्ति तक पहुँच सकना निस्सन्देह हास्यास्पद होगा।"

जिस दिन प्रभुपाद को "यह हास्यास्पद पत्र" मिला, उसी दिन उन्होंने भारत सरकार के असहयोग का अन्तिम उत्तर भी प्राप्त किया। वाशिंगटन में भारतीय दूतावास के द्वितीय सचिव, प्रकाश शाह ने लिखा :

> विदेशी मुद्रा विनिमय की वर्तमान परिस्थितियों के कारण भारत सरकार के लिए सम्भव नहीं है कि विदेशी मुद्रा मुक्त करने की आप की प्रार्थना स्वीकार की जाये। शायद आप अमेरिका के निवासियों से धन-संग्रह करना पसन्द करेंगे।

एक बात निश्चित हो गई : प्रभुपाद को बिना किसी बाहरी सहायता के कार्य करना होगा। वे न्यूयार्क नगर में अपना कार्य अकेले जारी रखेंगे। मुक्ति ब्रह्मचारी को लिखा गया उनका अन्तिम पत्र उनका अगाध विश्वास और दृढ़-निश्चय उद्घाटित करता है।

> अत: विवाद अब समाप्त होता है और किसी अन्य से सहायता की कोई आवश्यकता नहीं है। प्रचार-कार्य के अपने प्रयत्नों में हम हमेशा सफल नहीं होते, किन्तु ऐसी विफलताएँ निश्चय ही हास्यास्पद नहीं हैं। श्रील रूप गोस्वामी और श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी सोलहवीं शताब्दी के चैतन्य महाप्रभु के दो प्रमुख शिष्य थे। परमार्थ के क्षेत्र में सफलता और असफलता दोनों ही गौरवास्पद हैं। प्रभु नित्यानंद ने भी जगाई और मधाई को ईश्वरोन्मुख बनाने के अपने पहले प्रयास में विफलता का प्रदर्शन किया था। इस प्रयास में उन्हें निजी रूप में आघात पहुँचा था। किन्तु वह प्रयास निश्चय ही हास्यास्पद नहीं था। वरन् सब कुछ दिव्य था और सभी सम्बन्धित लोगों के लिए वह गौरवास्पद था।

यदि अमेरिका में कृष्ण-चेतना को कभी भी अपनी जड़ जमानी है, तो यह कार्य भारत सरकार या भारतीय वित्त-दाताओं की सहायता के बिना ही होना होगा। एक भारतीय ब्रह्मचारी भी उनकी सहायता के लिए नहीं आयेगा। प्रभुपाद के समक्ष कृष्ण

अपनी योजना का उद्घाटन भिन्न रूप से कर रहे थे। सिंघानिया की अनुदान-स्वीकृती समाप्त हो जाने पर और उसे पीछे छोड़कर, प्रभुपाद अपनी सम्पूर्ण शक्ति अपनी बोवरी की अटारी पर आने वाले नवयुवकों और नवयुवतियों की ओर मोड़ देने को तत्पर हो गये। उन्होंने सुमति मोरारजी को लिखा :

> अब मैं स्थानीय मित्रों और प्रशंसकों का अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ बनाने का प्रयास कर रहा हूँ।

• • •

अपने समस्त मित्रों और प्रशंसकों में से प्रभुपाद अपने कक्ष-सहवासी डेविड एलेन पर सर्वाधिक व्यक्तिगत ध्यान देने लगे। प्रशिक्षण में भी वे उसे सर्वप्रथम रखने लगे। उन्हें लगता कि वे डेविड को अमेरिका का प्रथम वास्तविक वैष्णव बनने का विशेष अवसर प्रदान कर रहे हैं। प्रभुपाद को अन्ततः भारत लौटना था और वे डेविड को वृन्दावन ले जाना चाहते थे। वे उसे मन्दिर-पूजा दिखाना और पश्चिम में भावी प्रचार-कार्य के लिए प्रशिक्षित करना चाहते थे। उन्होंने सुमति मोरारजी से डेविड के लिए और स्वयं अपने लिए निःशुल्क समुद्री-यात्रा की व्यवस्था करने की लिखा प्रार्थना की। उन्होंने लिखा :

> आपको इस अमरीकी बालक से मिलकर प्रसन्नता होगी। वह एक अच्छे परिवार का है और संस्कृति की इस दिशा में सच्चा जीव हैं। जो कक्षा मैं यहाँ चला रहा हूँ, उसमें अन्य भी हैं, किन्तु मैं उनमें से केवल एक को अपने साथ लाना चाहता हूँ।

(प्रभुपाद ने एक दिन अपने संध्याकालीन व्याख्यान में कहा) मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता है कि हमारे श्रीमान् डेविड कभी-कभी कहते हैं कि, "स्वामीजी, मैं अविलम्ब अपने आध्यात्मिक जीवन को समृद्ध बनाना चाहता हूँ" (डेविड की आतुरता का अनुकरण करते हुए प्रभुपाद हंस पड़े।) मैं उससे कहता हूँ "धैर्य धारण करो, धैर्य धारण करो। समय आने पर सब कुछ हो जायेगा। जब तुम्हारी ऐसी इच्छा है, तो ईश्वर तुम्हारी सहायता करेंगे। वे तुम्हारे भीतर हैं। वे केवल यह देखना चाहते हैं कि तुम कितने खरे हो। फिर वे तुमको अपने आध्यात्मिक जीवन को समृद्ध बनाने के सारे अवसर प्रदान करेंगे।"

पहले तो डेविड और स्वामीजी उस बड़े हाल में एकसाथ शान्तिपूर्वक रहते रहे; स्वामीजी विभाजक के अपनी ओर ध्यानमग्न होकर काम करते रहते और डेविड पूरे खुले

स्थान में रहता। किन्तु उसने मारिजुआना, एल.एस.डी और एम्फेटामीन का सेवन जारी रखा और स्वामीजी के पास इसे सहते रहने के अतिरिक्त कोई चारा न था। उन्होंने डेविड से कई बार कहा कि नशीली दवाओं के सेवन और इन्द्रजालों से उसके आध्यात्मिक जीवन में कोई सहायता नहीं मिलेगी, किन्तु डेविड उद्विग्न दिखाई देता। वह स्वामीजी से दूर होता जा रहा था।

किन्तु प्रभुपाद उस प्रकोष्ठ को मन्दिर की तरह बरतने की योजना बना चुके थे—वे उसे न्यूयार्क में राधा-कृष्ण के प्रथम मन्दिर के रूप में बदल देना चाहते थे—और इसमें वे डेविड के सहयोग की अपेक्षा रखते थे। यद्यपि पास-पड़ोस की स्थिति विश्व की अत्यन्त दयनीय स्थिति थी, तब भी प्रभुपाद जयपुर या वृन्दावन से अर्चाविग्रह लाने और बोवरी में ही मन्दिर-पूजा आरम्भ कर देने की बातें करते रहते। वे सोचते थे कि इसमें डेविड सहायता कर सकता है। आखिर, वे कक्ष-सहवासी थे; इसलिए डेविड के सहयोग न देने का प्रश्न ही नहीं उठता था; किन्तु उसे अपनी बुरी आदतें छोड़नी होंगी।

प्रभुपाद डेविड की सहायता करने की कोशिश कर रहे थे, किन्तु डेविड अत्यन्त उद्विग्न था। वह विपत्ति की ओर आगे बढ़ चुका था और उसी तरह प्रभुपाद की प्रकोष्ठ सम्बन्धी योजनाएँ भी। कभी-कभी, जब वह नशीली दवाओं के प्रभाव में न भी रहता, वह प्रकोष्ठ के चारों ओर टहलने लगता। अन्य समयों में वह गहरे विचारों में डूबा लगता। एक दिन एल.एस.डी. की एक खुराक लेकर वह बुरी तरह पागल-जैसा हो गया। जैसाकि कार्ल इयरजेन्स ने बताया, "वह झटके से बाहर निकला और स्वामीजी को उसके साथ ऐसा बर्ताव करना पड़ा, जैसा एक पागल के साथ किया जाता है।" बातें यहाँ तक बढ़ गईं कि, "वह अत्यधिक नशा करने वाला पागल लड़का" कहलाने लगा। किन्तु वास्तविक पागलपन तो अचानक आया।

एक दिन स्वामीजी अपने टाइपराइटर पर शान्तिपूर्वक काम कर रहे थे कि डेविड "सनक उठा।" वह विलाप करते हुए प्रकोष्ठ के विस्तृत खुले भाग में टहलने लगा। फिर वह चिल्लाने, गुर्राने और चारों ओर भागने लगा। वह पुन: लौटकर वहाँ गया जहाँ स्वामीजी थे। एकाएक प्रभुपाद ने अपने आपको डेविड के सामने पाया—अपने उस प्यारे डेविड के सामने नहीं, जिसे वे भारत ले जाकर वृन्दावन में ब्राह्मणों को दिखाना चाह रहे थे—वरन् नशीली दवाएँ खाए, आँखें फाड़े, पागल, एक अपरिचित के सामने।

प्रभुपाद ने उससे बात करने की कोशिश की, "मामला क्या है?"—किन्तु डेविड के पास कुछ कहने को नहीं था। दोनों के बीच कोई विशेष असहमति थी ही नहीं। था केवल पागलपन...।

• • •

प्रभुपाद शीघ्रतापूर्वक चार सोपान से नीचे उतर गये। वे न तो अपना सामान इकट्ठा करने के लिए रुके और न ही यह निश्चय करने के लिए कि वे कहाँ जायें और वापस आयेंगे भी या नहीं। कुछ भी सोचने के लिए समय नहीं था। उन्हें गहरा धक्का लगा था और अब वे डेविड के पागलपन का क्षेत्र छोड़ रहे थे। उनके दरवाजे पर आवारा लड़के हररोज की तरह बैठे थे। उन्होंने सामान्य शिष्टाचार-प्रदर्शन के साथ उन्हें बाहर जाने दिया। वे वयोवृद्ध स्वामीजी के अन्दर-बाहर आने-जाने, दुकान तक जाकर सौदा खरीदने और फिर वापस आने के अभ्यस्त थे और उन्हें परेशान नहीं करते थे। किन्तु स्वामीजी आज सौदा खरीदने नहीं जा रहे थे। तो वे कहाँ जा रहे थे? वे स्वयं नहीं जानते थे। वे यह जाने बिना ही सड़क पर आ गये थे कि उन्हें कहाँ जाना है।

वे अपनी अटारी पर वापस नहीं जा रहे थे—इतना निश्चित था। किन्तु वे कहाँ जायें? कबूतर एक छत से दूसरी छत पर उड़ रहे थे। यातायात गड़गड़ाता हुआ चल रहा था और सदा-उपस्थित रहने वाले आवारा छोकरे सस्ती, जहरीली शराब पीकर अधिकाधिक नशे में मत्त, इधर-उधर मंडरा रहे थे। यद्यपि प्रभुपाद का घर अचानक पागलपन के भयावह स्थान में बदल गया था, उनके दरवाजे पर की सड़क भी नारकीय खतरनाक जगह बनी हुई थी। वे काँप उठे। वे डॉ. मिश्र के यहाँ खबर कर सकते थे और वे उन्हें अपने घर में ले जा सकते थे। किन्तु उनके जीवन का वह अध्याय समाप्त हो चुका था और वे वहाँ से बेहतर स्थान पर पहुँच चुके थे। वे अपनी कक्षाएँ चलाते थे; नवयुवक कीर्तन करते और सुनते थे। क्या वह सब अब समाप्त हो गया था? अमेरिका में नौ महीने रहने के बाद अन्त में उनके प्रचार और कीर्तन की अच्छी प्रतिक्रिया हुई थी। अब वे उसका त्याग नहीं कर सकते थे।

वही ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज, जिन्हें वृन्दावन में प्रत्येक व्यक्ति विख्यात विद्वान और भक्त मानता था और आदर की दृष्टि से देखता था और जिन्हें भारत के उपराष्ट्रपति तथा अन्य सम्माननीय व्यक्तियों से जब चाहें मिलने का खुला निमन्त्रण था, अब ऐसी विषम स्थिति का सामना कर रहे थे कि संयुक्त राज्य में उनका एक भी प्रतिष्ठित मित्र नहीं था। एकाएक वे ऐसे बेघर हो गये थे, जैसे सड़क पर कोई लावारिस। वास्तव में लावारिसों में से बहुत-से ऐसे थे, जो सस्ते होटलों में लम्बे समय से अपना स्थान बना चुके थे और इसलिए वे उनसे अधिक सुरक्षित थे। वे विनष्ट हो गये थे, पर सुस्थिर थे। प्रभुपाद सोचने लगे कि यदि सीधे स्टोर या अपने स्थान पर वापस जाना वांछनीय उद्देश्य नहीं है, तो बोवरी जाना अव्यवस्थापूर्ण नरक में जाने के समान होगा, किन्तु सड़क में खड़े होकर उनके लिए यह सोचने का समय नहीं रह गया था कि उन्हें कहाँ रहना है या कोई ऐसा मित्र है, जिसके पास जाया जा सके। इस समय वे न तो चाइनाटाउन की किसी दुकान

पर सौदा खरीदने जा रहे थे, न ही घूमने निकले थे कि शीघ्र अपने प्रकोष्ठ लौट जायें। पर यदि वे प्रकोष्ठ को नहीं लौटते, तो उनके लिए कोई शरण नहीं है।

अमेरिका में ऐसे सनकी लोगों के वीच प्रचार कर पाना कितना कठिन हो रहा था! जिस दिन वे बोस्टन बन्दरगाह में पहुँचे थे, उसी दिन एक पूर्वद्रष्टा कवि के रूप में उन्होंने एक कविता में लिख था, "मेरे प्रिय प्रभु, मैं नहीं जानता कि आप मुझे यहाँ क्यों लाए हैं। अब आप मेरे साथ जो चाहें, कर सकते हैं। किन्तु मेरा अनुमान है कि आपका यहाँ कोई काम है, अन्यथा आप मुझे इस भयानक स्थान में क्यों लाते?" उनकी निर्धारित कक्षाओं का क्या होगा? डेविड के विषय में क्या करें?—क्या वे वापस जायें और उस बालक से बात करने का प्रयत्न करें? डेविड का यह पहला हिंसात्मक दौरा था, किन्तु इसके पहले भी उत्तेजनापूर्ण अवसर आ चुके थे। डेविड की आदत स्नानघर में फर्श पर साबुन छोड़ देने की थी और प्रभुपाद ने उसे ऐसा करने से मना किया था, क्योंकि इसमें खतरा था। किन्तु डेविड ध्यान नहीं देता था। प्रभुपाद उसे याद दिलाते रहते थे और एक दिन डेविड क्रोध में आकर उन पर चिल्लाने लगा था। किन्तु दोनों के बीच कोई वास्तविक दुश्मनी नहीं थी। आज की घटना भी व्यक्तिगत मतभेदों के कारण नहीं घटी थी—बालक अपनी सनक का शिकार था।

प्रभुपाद तेजी से आगे बढ़े। सिन्धिया जहाज से उन्हें नि:शुल्क यात्रा की सुविधा थी। वे अपने घर वृन्दावन लौट सकते थे; किन्तु उनके गुरु महाराज ने उन्हें यहाँ आने का आदेश दिया था। अटलांटिक पार करते समय उन्होंने लिखा था कि, "श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर की प्रबल इच्छा से महाप्रभु गौरांग का पवित्र नाम पश्चिमी संसार के सभी देशों में फैलेगा।" रात होने के पहले अपने ठहरने के लिए उन्हें कोई स्थान ढूँढ लेना होगा, जिससे वे अपने प्रचार के वेग को बनाए रख सकें। इसी को कहते हैं बिना किसी सरकारी समर्थन के, बिना किसी धार्मिक संस्था की सहायता के, बिना किसी संरक्षक के कार्य करना। इसका अर्थ था सर्वथा दुर्बल और असुरक्षित रहना। प्रभुपाद ने इस संकट का सामना कृष्ण की परीक्षा के रूप में किया। *भगवद्गीता* का उपदेश था रक्षा के लिए कृष्ण पर निर्भर रहना : "सब कार्यों में केवल मुझ पर आश्रित रहो और सदैव मेरी शरण में रहकर कार्य करो। ऐसी भक्ति-सेवा में मेरे प्रति पूर्ण सचेत रहो... मेरी कृपा से तुम बद्ध जीवन के सारे अवरोधों को पार कर जाओगे।"

प्रभुपाद ने कार्ल इयरजेंस को फोन करके उससे सहायता माँगने का निश्चय किया। स्वामीजी की वाणी फोन पर सुनकर कार्ल ने समझ लिया कि वह आपात स्थिति थी। वह तुरन्त सहमत हो गया कि प्रभुपाद उसके और उसकी पत्नी इवा के साथ रहने के लिए आ सकते हैं। उनका निवास निकट ही, वोवरी के पाँच ब्लाक पश्चिम में चाइनाटाउन के पास

सेंटर स्ट्रीट में था। कार्ल वहाँ शीघ्र पहुँच जायेगा।

• • •

प्रभुपाद को पाकर कार्ल उन्हें लेकर सीधे ए.आई.आर. अटारी में अपने स्थान पर गया। यह स्थान उससे छोटा था, जिसमें प्रभुपाद रह रहे थे। उसमें बैठक के लिए बड़ी, खुली जगह थी और उससे रसोई-घर और शयन-कक्ष अलग कर दिए गये थे। वह जगह छाया में रखने वाले नकली फूल-पौधों से सजी थी और बहुत सारे छोटे तकिए इधर-उधर पड़े थे। कार्ल की अटारी बोवरी की गंदी, कारखाने जैसी जगह वाली अटारी से अधिक साफ-सुथरी थी। उसका फर्श चमकदार नारंगी रंग से रंगा था। कार्ल का कहना था कि वह जहाज के डेक जैसा लगता था। उसकी दीवालें और भीतरी छत सफेद थीं और छत पर लगे सात रोशनदानों से आने वाले प्रकाश से कमरा आलोकित रहता था। कार्ल और इवा ने स्वामीजी को एक कोने में बसा दिया।

प्रभुपाद अपना सब सामान डेविड की अटारी में छोड़ आये थे और वहाँ फिर नहीं जाना चाहते थे, इसलिए कुछ जरूरी सामान लाने के लिए कार्ल वहाँ गया। प्रभुपाद ने उससे कहा कि अधिकतर सामान जिनमें उनकी पुस्तकें, बक्से और टेप रेकार्डर सम्मिलित थे, वैसे के वैसे वहीं छोड़ दे।

यद्यपि उस समय तक डेविड पर एल.एस.डी. का प्रभाव कम हो गया था, किन्तु वह फिर भी सनकी बना रहा। जब कार्ल उसकी अटारी पर पहुँचा, तो उसका दरवाजा बन्द था और डेविड अन्दर था। वह किसी को अन्दर आने देने से डर रहा था, यद्यपि अन्त में वह राजी हो गया। उसने सभी खिड़कियाँ बन्द करके उनमें ताले लगा दिए थे, जिससे कमरा असह्य रूप में गर्म और घुटनकारी हो गया था। बिल एप्स्टीन भी उसी दिन वहाँ आ गया था; उसने डेविड की दशा का वर्णन यह कहकर किया कि उसे "नार्कोसाइकोसिस अथवा मादक-द्रव्य-जात स्नायविक बीमारी" हो गई है। यद्यपि डेविड को इसका दुख था कि वह स्वामीजी पर उत्तेजित हो उठा था, किन्तु बिल और कार्ल में से कोई भी इसे ठीक नहीं समझता था कि स्वामीजी उसके साथ फिर से रहें। स्पष्ट था कि अटारी में राधा-कृष्ण मन्दिर बनाने की सारी सम्भावनाएँ प्रभुपाद के लिए समाप्त हो गई थीं। कार्ल और बिल प्रभुपाद का कुछ सामान इकट्ठा करके ले गये और डेविड अटारी में पीछे रहता रहा। उसे एकान्त चाहिए था।

कार्ल इयरजेन्स प्रभुपाद की रहन-सहन की आदतें जानता था और वह चाहता था कि एक ऐसा उपयुक्त स्थान मिल जाये, जहाँ वे रहकर कार्य कर सकें। उसकी अटारी के एक सिरे पर उसका अध्ययन-कक्ष था; उसने उसे ही स्वामीजी के लिए नियत कर दिया। कार्ल

ने उसमें एक गद्दीदार मंच बना दिया और कमरे को इस तरह व्यवस्थित कर दिया कि अभ्यागत उसके आसपास अर्धवृत्त बनाकर फर्श पर बैठ सकें। कार्ल की पत्नी को किसी स्वामी को घर में रहने देना बिलकुल पसन्द नहीं था, पर किसी तरह वह कुछ गद्दों पर उनके लिए भारत के मद्रासी कपड़े के कवर लगाने पर राजी हो गई।

कुछ समय तक सब कुछ ठीक चलता रहा। प्रभुपाद अपनी सुबह-शाम की कक्षाएँ लेते रहे और बोवरी के हिप्पियों के झुंड में से बहुत-से वहाँ आते रहे। प्रभुपाद के नियमित अभ्यागतों में से तीन उसी इमारत में रहते थे और कुछ अन्य, जिनमें कार्ल का भाई भी था, उस ब्लाक के पास में रहते थे। माइकल ग्रांट, जेम्स ग्रीन—और डेविड एलेन भी एक बार वहाँ आये।

डान नाथन्सन (एक कलाकार) : *मैं एक दिन कार्ल की अटारी में था और स्वामीजी घूमते हुए वहाँ आ गये। मुझे पहले से ही मालूम था कि वे डेविड के यहाँ से वहाँ चले आये हैं। उनके पास अधिकतर गवैये आते थे। उस दिन वे उनके साथ सवेरे की व्यक्तिगत बैठक का आनन्द ले रहे थे। और सचमुच यह बहुत आश्चर्यजनक था, क्योंकि वे लगभग रात-भर जगने वाले लोग थे और स्वामीजी अपनी एक घंटे की बैठक सवेरे छह बजे करते थे। वे अपने हाथ के मंजीरों से डोट-डोट-डाह, डोट-डोट-डाह की ध्वनि करते हुए कीर्तन में उनका नेतृत्व करते थे। यह विचित्र लगता था, क्योंकि यद्यपि वे खूब पढ़े-लिखे लोग थे, वे गहरे नशेबाज थे, किन्तु कुछ समय तक उनमें से नौ-दस गवैये स्वामीजी के कीर्तन में प्रत्येक दिन सवेरे जाते रहे और इसमें उन्हें बड़ा आनन्द आता रहा। उन्हें बड़ा आनन्द आता कि वे यह सब कुछ सवेरे करते हैं।*

कार्ल को लगा कि जो सर्जक-समुदाय स्वामीजी से मिलने उनके कला-कक्ष में आता था, वह शीघ्र ही उनके कीर्तन की मनोदशा में प्रविष्ट हो गया; किन्तु वे लोग "इसका प्रयोग अपने ढंग से अपनी निजी अर्न्तदृष्टि और भावातिरेक के संवर्धन में कर रहे थे।" भक्ति के अनुशासन अथवा भगवान् कृष्ण की अनन्य उपासना को अंगीकार करना उनका वास्तविक उद्देश्य नहीं था। किसी वास्तविक आध्यात्मिक पुरुष के रूप में उनका पहला सम्पर्क प्रभुपाद से हुआ था, तथापि कुछ समझने-बूझने का प्रयत्न किये बिना ही वे उनके कीर्तनों में और जो कुछ वे कहते थे, उसमें तल्लीन हो गये थे। कार्ल उनको आमंत्रित करता, "हे! आइये! यही सच्चा है। यही वास्तविक है। आप इसे पसन्द करेंगे। यही संगीत है। यही नृत्य है। यही महोत्सव है।" कार्ल ने देखा कि, "लोगों को स्वामीजी के समक्ष रहना, कीर्तन में ध्यान लगाना और उनके द्वारा तैयार किये गये व्यंजनों को ग्रहण करना अच्छा लगता है। कदाचित् उनकी रचनात्मक अन्तर्दृष्टि के क्षणों के अतिरिक्त यह अनुभव उनके पूर्व अनुभवों से सर्वथा भिन्न था।"

तथापि प्रभुपाद की उपस्थिति मात्र कार्ल और इवा के लिए कठिनाई का कारण बन गई। अमेरिका के अपने सम्पूर्ण अधिवास-काल में स्वामीजी किसी के लिए इससे अधिक असुविधाजनक और अवांछनीय अतिथि कभी नहीं बने थे। कार्ल के कला-कक्ष की व्यवस्था इस प्रकार की गई थी कि उसमें वह और उसकी पत्नी अकेले रह सकें और शयन-कक्ष, रसोई-घर और बैठक का प्रयोग जैसे चाहें वैसे कर सकें। यदि वे मारिजुआना पीना चाहें, मांस खाना चाहें या और कुछ करना चाहें, तो इसमें उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता थी। यह कार्ल का घर था, यहाँ वह अपनी पत्नी इवा, अपने कुत्तों और अपनी बिल्लियों के साथ रहता था। किन्तु अब उन्हें स्वामीजी के साथ इसे बाँटना पड़ रहा था।

इवा के लिए स्थिति लगभग तत्क्षण असह्य हो गई। अपने घर में स्वामीजी की उपस्थिति उसे बुरी लगने लगी। काले पति और अच्छी नौकरी वाली वह, एक स्वतंत्र श्वेत महिला थी। स्त्रियों के सम्बन्ध में स्वामीजी के विचार उसे पसन्द नहीं थे। उसने उनकी पुस्तकें नहीं पढ़ी थीं, न ही वह उनकी कक्षाओं में गई थी, किन्तु उसने सुन रखा था कि सन्तानोत्पत्ति के अतिरिक्त स्वामीजी यौनसंभोग के विरुद्ध थे और उनके विचार के अनुसार स्त्री को लज्जाशील और पतिव्रता होना चाहिए तथा अपने पति के आध्यात्मिक जीवन में सहायता करनी चाहिए। वह स्वामीजी के चार नियमों के विषय में जानती थी—मांसाहार नहीं, अवैध यौन-सम्बन्ध नहीं, मद्य-सेवन नहीं, द्यूत-क्रीड़ा नहीं। और इवा यह, निश्चित ही नहीं चाहती थी कि स्वामीजी कार्ल की जीवन-शैली को अपने अनुकूल परिवर्तन करने का प्रयत्न करें। और उन्हें यह अपेक्षा बिलकुल नहीं करनी चाहिए कि वह नौकरानी की तरह उनकी टहल करेगी। उसे ऐसा आभास हुआ कि वह जो कुछ करती थी, स्वामीजी लगभग उन सभी चीजों का विरोध करते थे। यदि वह उनकी सलाह लेती, तो वे सम्भवतः उसे नशीली दवाएँ लेने से मना कर देते, उसके कुत्तों, बिल्लियों को हटा देते, शराब पीना छोड़ देने और गर्भ-विरोधी यौन-संभोग न करने को कहते। यदि स्वामीजी की चले तो उन्हें केवल कुछ निश्चित समयों में ही खाना होगा और कुछ निश्चित चीजें ही। इवा को धूम्रपान की गहरी लत थी, इसलिए स्वामीजी सम्भवतः उसके आसपास रहना पसन्द नहीं करेंगे। वह उनसे भिड़ने को तैयार थी।

किन्तु प्रभुपाद ऐसे नहीं थे कि किसी दूसरे के घर में रहते हुए वे उससे असह्य अपेक्षाएँ रखें। वे अटारी के अपने निर्धारित कोने में रहते थे और न किसी प्रकार की माँग करते थे, न आलोचना करते थे। क्या उन्होंने बटलर में अपने मेजबानों को मांस खाते नहीं देखा था और केवल इतनी ही टिप्पणी की थी, "इस विषय में कुछ न सोचो?" फिर भी उनकी प्रभावपूर्ण आध्यात्मिक उपस्थिति से इवा को इस बात का दुख था कि कार्ल की उनसे भेंट क्यों हुई। इवा के लिए स्वामीजी प्रतिकूल शक्तिस्वरूप थे और अपनी खुली

और स्वतंत्र प्रकृति के कारण उसने स्वामीजी को इससे अवगत करा दिया। जैसे ही स्वामीजी कहते कि क्या वह उनके लिए कोई वस्तु ला सकती है, इवा झट उत्तर देती, "आप स्वयं ले आयें।"

कैरोल बेकर ने देखा कि स्थिति अत्यन्त असुविधाजनक और तनावपूर्ण हो गई थी, "इवा बहुत रुष्ट थी।" इवा ने कैरोल से शिकायत की कि वह अटारी का किराया दे रही थी, कड़ा परिश्रम कर रही थी और यह व्यक्ति उनकी जीवन-शैली को बदल देने की कोशिश कर रहा था।

कैरोल : *इवा प्रभुपाद के उपदेशों को स्वीकार नहीं कर पा रही थी और वह कार्ल के ऊपर उनके प्रभाव को भी स्वीकार नहीं कर पा रही थी। वह अपने आपको बाध्य अनुभव नहीं करती थी, किन्तु वह यह अनुभव करती थी कि स्वामीजी के कारण कार्ल अपने आपको प्रतिबन्धित अनुभव कर रहा था।*

इवा की मुख्य आपत्ति यही थी कि स्वामीजी कार्ल को प्रभावित कर रहे थे। कार्ल के साथ उसका सम्बन्ध हाल में ही आरम्भ हुआ था और कार्ल को मालूम था कि इवा को उसका अधिकतर समय चाहिए था। कार्ल अपनी पत्नी से सहमत था, फिर भी वह स्वामीजी को अस्वीकार नहीं कर सकता था। भारतीय संगीत, कविता और धर्मों में उसकी रुचि थी और स्वामीजी के रूप में उसे अपने ही घर में भारतीय संस्कृति के सभी पक्षों में पारंगत एक जीता-जागता अधिकारी मिल गया था। प्रभुपाद उनके रसोई-घर में अपना भोजन बनाने लगते, तो भारतीय पाक-विद्या की कला सीखने की जिज्ञासा लिए हुए कार्ल तुरन्त वहाँ पहुँच जाता। कार्ल स्वामीजी से यह भी चाहता था कि वे उसे मृदंग बजाना सिखा दें। स्वामीजी और कार्ल साथ-बैठे लम्बे समय तक बातें किया करते।

कैरोल : *कार्ल ऐसा कुछ बनने का प्रयत्न कर रहा था, जैसा वास्तव में वह था नहीं, किन्तु वह स्वामीजी को कभी यह संकेत न देता कि उन्हें उसके यहाँ से चले जाना पड़ेगा। मुझे विश्वास है कि स्वामीजी इतने कुशाग्र बुद्धि वाले थे कि वे इस तनाव को समझ जाएंगे और वे यथाशीघ्र अन्यत्र चले जाने का प्रयत्न करने लगेंगे।*

धीरे-धीरे प्रभुपाद से कार्ल का सम्बन्ध एक विषम स्थिति में पहुँच गया। उसका जीवन उसकी पत्नी और प्रभुपाद दोनों सभी इकट्ठा रहने से नहीं चल सकता था और अन्ततः उसका झुकाव अपनी पत्नी की ओर अधिक हो गया।

कार्ल : *मैं अपने प्रकोष्ठ को मन्दिर बनते नहीं देख सकता था। मैं बिल्लियाँ और कुत्ते पाल रहा था और वे उन्हें हटवा देना चाहते थे। वे मुझे मांसाहारी कहते थे। उन्होंने हम लोगों का भोजन बदल दिया। निस्सन्देह वे अमरीकी संस्कृति पर प्रहार कर रहे थे, जो नहीं जानती कि जो स्वामीजी कर रहे हैं, यह सब क्या धंधा है। मुझे तो अमरीकी संस्कृति*

उतनी ही आत्मसात् करनी है, जितनी कोई अन्य अमेरिकन कर सकता है। भारत को मैं किसी पुस्तक, रेकार्ड जैसे निर्वैयक्तिक माध्यम से समझकर आत्मसात् कर सकता था, किन्तु यहाँ तो श्रीभगवान् का साक्षात् प्रतिनिधि विद्यमान था और इसके समान कठिनाई का सामना न मैंने कभी पहले किया था, न आगे करने की आशा थी।

प्रभुपाद की उपस्थिति से कार्ल को जो परेशानी हो रही थी, उसके प्रति वे असंवेदनशील नहीं थे। वे किसी को कष्ट नहीं देना चाहते थे और निस्सन्देह वे अपने और इवा जैसे सभी लोगों को कष्ट से बचा सकते थे, यदि वे अमेरिका न आये होते। किन्तु उन्हें आराम या कष्ट की, इवा को प्रसन्न अथवा अप्रसन्न करने की कोई चिन्ता नहीं थी। वे कृष्णभावनामृत सिखाना चाहते थे।

प्रभुपाद का एक मिशन था और कार्ल की अटारी इसके लिए उपयुक्त आधार नहीं प्रतीत हो रही थी। प्रभुपाद के सभी मित्र सहमत थे : उन्हें इस कार्य के केन्द्र की ओर अधिक बढ़ना चाहिए। बोवरी और चाइनाटाउन केन्द्र से बहुत दूर थे। वे उनके लिए एक नया स्थान खोजेंगे।

कठिन परिस्थितियों से विवश होकर, जिन्हें उन्होंने कृष्ण का अनुग्रह माना, प्रभुपाद धैर्यपूर्वक बैठे रहे। वे किसी को परेशानी में नहीं डालना चाहते थे, फिर भी दिन-रात वे कृष्णभावनामृत के विषय में बोलते रहे। कार्ल ने उन्हें विश्वास दिलाया कि आधे दर्जन लोग उनके लिए नया स्थान खोजने में लगे हैं, इसलिए उसे पाने में अधिक समय नहीं लगेगा; वे सब मिलकर किराए के भुगतान में उनकी सहायता करेंगे।

• • •

एक सप्ताह बीत गया और स्वामीजी के उपयुक्त किसी को कोई स्थान नहीं मिल पाया। एक दिन प्रभुपाद ने सुझाया कि वे और कार्ल, दोनों ही घूमते हुए माइकेल ग्रांट के यहाँ चलें और उसे सहायता के लिए कहें।

माइक : *एक दिन बड़े सवेरे किसी ने मुझे जगा दिया और यह कार्ल का फोन था; वह कह रहा था, "स्वामीजी और मैं इस समय टहलने निकले हैं और हमने सोचा कि हम आकर तुमसे मिलें।" मैंने कहा, "लेकिन अभी तो बहुत सवेरा है।" और वह बोला, "ठीक, पर स्वामीजी तुमसे मिलना चाहते हैं।" वे कहीं निकट ही थे, सड़क के आसपास ही, इसलिए मुझे जल्दी कपड़े पहनने पड़े और जब तक मैं दरवाजे पर पहुँचूँ, वे वहाँ आ गये थे।*

मैं बिल्कुल ही तैयार नहीं था, किन्तु मैंने उन्हें ऊपर आमंत्रित किया। टेलीविजन पिछली रात से चल रहा था और उस पर कुछ व्यंग्य चित्र (कार्टून) आ रहे थे। स्वामीजी

मेरे और कार्ल के बीच सोफे पर बैठ गये। मैंने एक बिल्ली पाल रखी थी, बिल्ली उछलकर स्वामीजी की गोद में बैठ गई और उन्होंने अचानक उसे फर्श पर फेंक दिया। हम बातें करने लगे। किन्तु स्वामीजी ने टेलीविजन पर आ रहे व्यंग्य चित्रों को देखा और कहा, "यह पागलपन है।" एकाएक मुझे ध्यान आया कि टेलीविजन चल रहा था और वह अनावश्यक था और मैं जल्दी से यह कहते हुए उठा, "हाँ, यह व्यर्थ है," और उसे बन्द कर दिया।

बातें करते हुए प्रभुपाद ने माइक को यह जताने की कोशिश की कि कार्ल और इवा के साथ रहना उनके लिए कितना कठिन था। माइक उनकी बात सुनता रहा। किन्तु क्या स्वामीजी ने निश्चय कर लिया था कि वे बोवरी की अटारी में वापस जाकर डेविड एलन के साथ नहीं रह सकेंगे? केवल उस एक घटना के अतिरिक्त वहाँ की व्यवस्था बहुत सुन्दर थी; क्या ऐसी नहीं थी? प्रभुपाद ने समझाया कि अत्यधिक एल.एस.डी. सेवन से डेविड पागल हो गया था। वह खतरनाक बन गया था। माइक ने प्रभुपाद को अर्ध-अविश्वास की दृष्टि से देखा। क्या डेविड एलेन खतरनाक हो सकता था? तब प्रभुपाद ने एक कहानी बताई : "भारत में एक पुरानी कहावत है कि आप किसी को अपना आध्यात्मिक गुरु बनाएँ, उसके समक्ष बैठें, जितना हो सके उससे सीखें, तब उसे मार डालें, उसके शव को एक ओर कर दें और तब उसके स्थान पर बैठ जायें और स्वयं गुरु बन जायें।" जब प्रभुपाद बोल रहे थे, माइक ने अनुभव किया कि डेविड खतरनाक हो गया था; अतः उसने और कोई विवरण नहीं पूछा।

माइक समझ गया कि स्वामीजी उससे सहायता चाह रहे थे और जब वे तीनों सोफे पर साथ बैठे थे तो माइक और कार्ल ने धीरे से सिर हिलाकर सहमति प्रकट की। स्वामीजी माइक की ओर देख रहे थे और माइक सोचने की कोशिश कर रहा था।

"तो हम स्वामीजी की सहायता कैसे कर सकते हैं?" कार्ल ने बीच में कहा।

माइक ने स्पष्ट किया कि वह पियानो बजाने वाला कलाकार था और उसे प्रतिदिन अभ्यास करना होता था। उसके पास दो पियानो, दो जोड़ी तबले, एक वाइब्राफोन और अन्य वाद्य-यंत्र थे, जो वहीं उसकी अटारी में रखे थे। वादक कलाकार अभ्यास के लिए प्रतिदिन वहाँ आते थे और वे घंटों अपने वाद्य-यंत्रों पर अभ्यास करते थे। इसके अतिरिक्त वह एक लड़की के साथ रह रहा था और अटारी में एक बिल्ली भी थी। किन्तु माइक ने वायदा किया कि स्वामीजी के लिए एक नया स्थान खोजने में वह सहायता करेगा। स्वामीजी ने उसे धन्यवाद दिया और जाने को वे कार्ल के साथ उठ खड़े हुए।

माइक ने अनुगृहीत अनुभव किया। वह कार्य कराने में कुशल था और वह स्वामीजी का कार्य करना चाहता था। अतः अगले दिन वह *विलेज वायस* के कार्यालय में गया;

उसकी पहली मुद्रित प्रति ली और सारे वर्गीकृत विज्ञापनों पर दृष्टि डाली, जब तक कि उसे एक उपयुक्त सम्भाव्य स्थान नहीं मिला। उसने उसके मालिक को फोन किया। वह स्थान सेकंड एवन्यू में एक स्टोरफ्रंट अर्थात् स्टोर का अगला भाग था। उसका एजेंट, श्रीमान् गार्डीनर वहाँ माइक से मिलने को राजी हो गया। कार्ल और स्वामीजी भी वहाँ जाने को राजी हो गये।

• • •

श्रीमान् गार्डीनर और माइक वहाँ पहले पहुँचे। माइक ने देखा कि स्टोरफ्रंट की सामने वाली खिड़की के ऊपर हाथ द्वारा विचित्र ढंग से अंकित "मैचलैस गिफ्ट्स" का नाम-पट्ट लगा था। श्रीमान् गार्डीनर ने स्पष्ट किया कि यह उसका शेष निशान था, जब यह स्थान उपहार बेचने वाली एक ऐसी दुकान के रूप में था, जिसकी याद लोगों को अब भी दुखी बनाती है। माइक ने स्वामीजी के बारे में वर्णन करते हुए उन्हें भारत का एक आध्यात्मिक नेता, विख्यात लेखक और संस्कृत का विद्वान बताया। किराए के एजेंट पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ता मालूम हुआ। प्रभुपाद और कार्ल के पहुँचने और प्रत्येक के आत्मीयतापूर्ण परिचय के तुरन्त बाद श्रीमान् गार्डीनर ने उन्हें वह छोटा स्टोरफ्रंट दिखाया। प्रभुपाद, कार्ल और माइक ने सावधानीपूर्वक उसकी सम्भावनाओं के विषय में विचार किया। स्टोरफ्रंट खाली, सादा और अँधेरा था—उसमें बिजली नहीं लगी थी—और उसमें फिर से पेंट करने की आवश्यकता थी। यह बैठकों के लिए उपयुक्त था, किन्तु स्वामीजी के रहने के लिए नहीं। किन्तु, १२५ डालर प्रतिमास की दृष्टि से यह ठीक लगता था। तब श्रीमान् गार्डीनर ने पीछे के आंगन के ठीक पार, स्टोरफ्रंट के बिल्कुल पीछे दूसरी मंजिल पर एक अटारी दिखाई। इकहत्तर डालर और अधिक किराया देने पर स्वामीजी वहाँ रह सकते थे, यद्यपि श्रीमान् गार्डीनर को फिर से उसे पेण्ट करवाना होगा। कुल किराया १९६ डालर होगा और कार्ल, माइक और अन्य लोग मिलकर इसकी व्यवस्था करेंगे।

प्रभुपाद का विचार श्रीमान् गार्डीनर को अपने प्रगतिशील कृष्णभावनामृत संघ का प्रथम विधिवत् न्यासी (ट्रस्टी) बनाने का था। परस्पर वार्तालाप के बीच उन्होंने *श्रीमद्भागवत* के तीन खंड श्रीमान् गार्डीनर को उपहार में दिए और आवरण पृष्ठ के भीतर व्यक्तिगत समर्पण अंकित किया और तब हस्ताक्षर किये "ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी।" श्रीमान् गार्डीनर ने स्वयं लेखक से ये पुस्तकें प्राप्त करके गर्व और सम्मान का अनुभव किया। वे कृष्णभावनामृत के नये संघ का न्यासी (ट्रस्टी) बनने और इसलिए संघ को २० डालर प्रति मास देने को राजी हो गये।

श्रीमान् गार्डीनर को अटारी को पेण्ट कराने में एक सप्ताह लगा। इस बीच माइक ने

उसमें पानी और बिजली की व्यवस्था कर दी और टेलीफोन लगवा दिया। कार्ल और उसने अपने मित्रों की सहायता से पहले महीने का किराया भी जमा कर लिया। जब सब कुछ तैयार हो गया, तो माइक ने कार्ल के निवास पर प्रभुपाद को टेलीफोन कर दिया।

• • •

अब स्वामीजी को उनके नये स्थान पर ले जाने का समय आ गया था। उस समय जो थोड़े-से मित्र वहाँ थे, वे स्वामीजी के साथ बोवरी वाली अटारी में गये। भले ही वे उनके समर्पित शिष्य बनने को तैयार न रहे हों, किन्तु पहले महीने का किराया जुटाने में योग देने और उनकी वस्तुओं को यथास्थान रखने में सहायता करने को वे सर्वथा स्वेच्छा से तैयार थे।

अटारी में उन्होंने स्वामीजी की वस्तुओं को एक-एक करके एकत्र किया और तब बोवरी से पैदल चल पड़े। प्रभुपाद की वस्तुओं से लदा हुआ यह छह व्यक्तियों का काफिला लगता था। माइकेल, राबर्ट द्वारा प्रदत्त टेपरेकार्डर लिए था और स्वामीजी ने भी दो सूटकेस उठा लिये थे। वे सारा कार्य इतनी तेजी से कर रहे थे कि जब तक वे मार्ग पर बहुत आगे नहीं बढ़ गये और माइक की बाँहें नहीं दुखने लगीं, उसे यह विचार नहीं आया कि, "हमने एक मोटर-कार क्यों नहीं ले ली?"

जून का अन्त था और ग्रीष्मकाल का धुंधला सूर्य बोवरी के जंगल पर अपनी गर्मी बरसा रहा था। यह विचित्र काफिला चलता-रुकता, एक ब्लाक से अधिक लम्बाई तक फैला हुआ, धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था। प्रभुपाद अपने सूटकेसों से जूझते हुए ग्रैंड, ब्रूम तथा स्प्रिंग गलियों के बीच भोजनालयों, दुकानों और लैम्प-भंडारों की अनंत प्रतीत होने वाली पंक्तियों के सामने से चले जा रहे थे। कभी कभी वे रुकते और सूटकेसों को जमीन पर रखकर विश्राम कर लेते। वे अन्तिम रूप से बोवरी को छोड़ रहे थे। उनके सेवंटी-सेकंड स्ट्रीट में रहने वाले बिजली के मिस्त्री-दोस्त ने राहत का अनुभव किया होगा, यद्यपि उसने शायद उनके इस सेकंड एवन्यू के निवास को भी नापसन्द किया होता। कम-से-कम प्रभुपाद का *स्किड रो* पर रहना तो खत्म हुआ। वे साल्वेशन आर्मी विश्रामालय के सामने गृहविहीन लोगों और खुले-दरवाजे वाले शराबखानों को पीछे छोड़ते हुए, सड़क की रोशनी में जगह-जगह रुकते हुए, नितांत अपरिचितों के मध्य खड़े होते हुए, अपने पीछे आने वाले मित्रों के जुलूस की प्रगति पर निगाह रखते हुए आगे बढ़ते जा रहे थे।

बोवरी के कलाकार तथा संगीतज्ञ स्वामीजी को "अत्यन्त विकसित" व्यक्ति मानते थे। उन्हें ऐसा लगता था कि प्रभुपाद का आत्मा उन्हें आगे बढ़ा रहा था और वे उनका निजी निवास व्यवस्थित कराने में सहायता देने को उत्सुक थे, जिससे वे अपना अमूल्य

आध्यात्मिक कार्य कर सकें और दूसरों के बीच भी उसका प्रसार कर सकें। सहायता के लिए स्वामीजी उन पर निर्भर थे, तथापि वे जानते थे कि स्वामीजी "उच्च स्तर" पर अवस्थित थे। वे स्वयं अपने रक्षक थे, या जैसाकि वे कहते थे, ईश्वर उनकी रक्षा कर रहा था।

स्वामीजी और उनके युवा-मित्र बोवरी और हूस्टन के कोने पर पहुँचे, दाहिनी ओर मुड़े और पूर्व की ओर बढ़ते गये। चलते समय निरन्तर आगे की ओर नजर गड़ाए प्रभुपाद ने एक ब्लाक की दूरी पर सेकंड एवन्यू के दक्षिणी छोर को देखा। सेकंड एवन्यू पहुँचकर वे बाएँ घूमेंगे, फर्स्ट स्ट्रीट से एक ब्लाक उत्तर की ओर जाकर अपने नये घर में पहुँच जायँगे। ज्योंही उन्होंने आई.एन.डी. तलमार्ग के प्रवेशद्वार को पार किया, स्टोरफ्रंट दिखने लगा—जहाँ 'मैचलेस गिफ्ट्स' लिखा हुआ था। उन्होंने अपने सूटकेसों को पकड़ा और आगे बढ़ चले। सेकंड एवन्यू और हूस्टन पर तेज यातायात के थोडा रुकने पर वे उसके बीच से जल्दी से सड़क पार कर गये। वे कम्पाऊंड की ऊंची दीवार के ऊपर हरे-हरे वृक्षों की चोटियों को देख सकते थे, जो उन्हें अपने नये मकान के अगवाड़े और पिछवाड़े की इमारतों की बीच वाली जगह पर ऊँचे उगे घास-फूस जैसे सिर उठा रहे थे।

सड़क के किनारे वाली इमारत में प्रभुपाद का सभागार था और पीछे की इमारत में उनके रहने और अनुवाद करने की अटारी थी। स्टोरफ्रंट से लगा हुआ उसके उत्तर की ओर एक विशाल नौ-मंजिला गोदाम था। स्टोरफ्रंट की इमारत केवल छह-मंजिली थी और वह सटी हुई बड़ी इमारत का छोटा बच्चा प्रतीत होती थी। स्टोरफ्रंट के दक्षिणी भाग में प्रभुपाद का नया मन्दिर था, जो सादे सिमेंट से बना था और उससे कोई मकान लगा हुआ न था। फर्स्ट स्ट्रीट के किनारे पर केवल विस्तृत और व्यस्त मोबिल सर्विस स्टेशन स्थित था। जब प्रभुपाद स्टोरफ्रंट पर पहुँचे, तो उन्होंने देखा कि दो छोटे लालटेन तंग प्रवेशद्वार पर लगे हुए थे।

कुछ निश्चित नहीं था कि वहाँ आगे क्या होगा। किन्तु पहले से ही शुभ लक्षण दिखाई देने लगे थे कि यद्यपि ये अमरीकी युवक कभी-कभी पागल-से हो जाते थे, किन्तु वे महाप्रभु चैतन्य के संकीर्तन-आन्दोलन में सचमुच भाग ले सकते थे। सम्भवतः इस नये स्थान में प्रभुपाद अपने अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के लिए वास्तविक दृढ़ आधार प्राप्त कर सकेंगे। ●